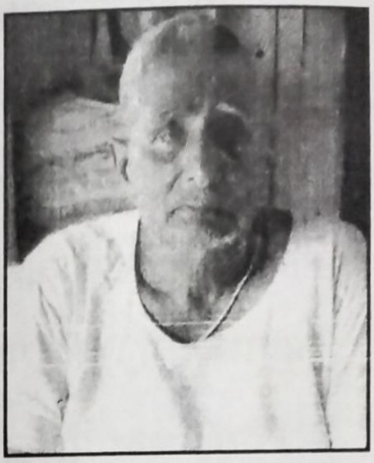
भृगु बंशी राम



जीवन परिचय



रीवा रियासत अन्तर्गत ग्राम मऊवगदरा तहसील पोस्ट आफिस व थाना मऊगंज में वेदान्ती परिवार में 4 मई 1940 को श्री शिशुपाल राम पिता श्री हनुमान राम् के यहां जन्म हुआ, सात वर्ष की आयु में पिता श्री शिशुपाल राम का गंगा दशहरा 1946 को निधन हो गया, भाई का जन्म पिताजी के देहावसन के तीन माह बाद हुआ।

1948 में परिवारिक विभाजन हुआ। दोनों भाई व एक बहन के लालन-पालन का बोझ माँ के ऊपर आ गया। आय का कोई जरिया नहीं था। गुजर् वसर के लिए कुछ धान्य खेतो से मिल जाता था जिससे गुजर नही होता था पेट की ज्वाला तथा पारिवारिक यातनाओं के मध्य दिन बीतने लगे, इस बात की जानकारी होने पर मांमा श्री कल्पधारी राम भरद्वाज को हुई तब से 1963 तक हमारे परिवार का लालन पालन करते रहे, शिक्षा भी कक्षा दस तक ही प्राप्त कर सका 1959 में शादी हो गई पहले वनविभाग में बाद में सहकारिता विभाग में छोटी नौकरी किया। उन्हें छोड़कर फरवरी 1974 में आरा मशीन डालकर लकड़ी का व्यवसाय करना शुरू किया। जो अब फल फूल रहा है, अब मेरी सभी कामनाएं पूर्ण हो चुकी है। इस समय जरा व्याधि में फसकर जीवन का शेष समय व्यतीत कर रहा हूँ।

त्रिवेणी प्रसाद मिश्र

स्थान - **मिश्रा टिम्बर**

बरहटा रोड़ मऊगंज रीवा (म.प्र.)

दो शब्द

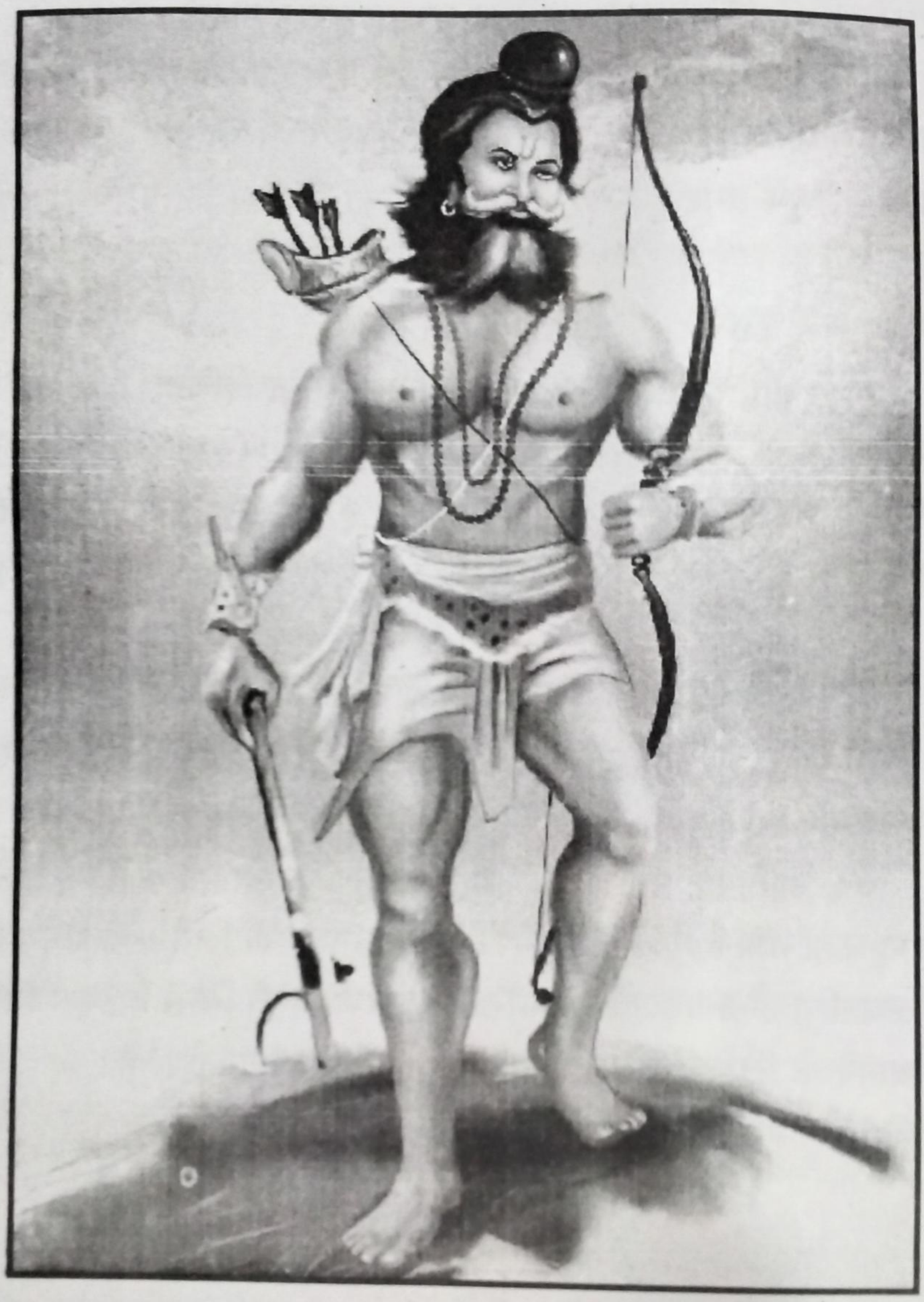
वर्ष 2008 वैशाख मास शुक्ल पक्ष अक्षय तृतीया को श्री सिद्ध हनुमान मंदिर मऊगंज जिला-रीवा में भगवान श्री परशुराम जयन्ती मनायी गयी, कुछ बुजुर्ग विद्वान बैठे थे, उनके समक्ष एक वक्ता ने अपने उद्‌बोधन में कहा -" भगवान परशुराम का कोई इतिहास नहीं है, इसलिये अवतारी महापुरूषों (आराध्यदेवों) की भांति जन-मानस में प्रसंगिक नहीं है। "

यह शुब्द मुझे कुछ अटपटा लगा, वक्ता का भाषण बंद हुआ, लोगों ने तालियां बजाई । मै उठकर चुपचाप चला गया, तब से उपनिषदों, पुराणों, इतिहासों तथा अन्य ग्रंथों के मध्य भगवान परशुराम की जीवन यात्रा (चरित्र) खोजकर सुधीर पाठकों के मध्य रखने का प्रयत्न किया।

यह एक संयोग है कि इस छोटी कथा के मध्य आपको भगवान भृगुवंशी राम, इक्ष्वांकु वंशी राम, तथा चन्द्रवंशी राम की कथा रूप में दर्शन होगा । अपने मन से मैनें कुछ भी नहीं लिखा, खोज में जो मिला वहीं लिखा, हो सकता है कि खोज में कोई अन्र्तकथा छूट गई हो, या भूल हो गई हो उसे सूचित करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सके।

भाद्रपद श्री कृष्ण
जन्माष्टमी 2009

त्रिवेणी प्रसाद मिश्र "वेदान्ती"
मिश्रा टिम्बर मऊगंज
रीवा (म.प्र.)



स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक त्रिवेणी प्रसाद मिश्र द्वारा क्लासिक कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, भोपाल से मुद्रित एवं मिश्रा टिम्बर बरहटा रोड, मऊगंज जिला-रीवा (म.प्र.) से प्रकाशित। मो. 7489993489

प्रथम संस्करण : दिनांक-15-09-2015

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्ण मेवावशिष्यते ।।(ईशावास्योपनिषद)

(वह परमब्रह्म परमात्मा सर्वप्रकार पूर्ण है, और विश्व भी परिपूर्ण ही है, उस पूर्ण से यह पूर्ण प्रगट हुआ हे, पूर्ण के पूर्ण को निकाल देने पर पूर्ण ही शेष बचता है)

भूतानाम् प्राणिनः श्रेष्ठः प्राणिनां बुद्धिजीविनः ।
बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु, ब्रह्मणः, स्मृताः ।।(मनु. अ. 1-95)

(स्थावर- जंगम् पदार्थों में कृमि आदि जीव श्रेष्ठ है, इन जीवों में पशु-पक्षी श्रेष्ठ है, और बुद्धि रखने वालों में मनुष्य तथा मनुष्यों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है ।)

ब्राह्मणों जायमानो हि पृथिव्यामधि जायते ।(मनु. 99)

(ब्रह्मण का उत्पन्न होना सर्वश्रेष्ठ उत्पत्ति है, वह सर्व जीवों के धर्मों की रक्षा में समर्थ होता है।)

वेद, उपनिषद, पुराण तथा ग्रंथो में ब्राह्मण की महिमा कहीं गई है तथा यह भी कहा गया है कि गौ, ब्राह्मणों का हितसाधन के लिये यथा समय हरि को अवतरित होना पड़ता है । **आखिर ब्राह्मण कहते किसे है?** इस विषय को जानने के लिये ब्रज सूचिकोपनिषद का कथन 'ज्ञाननीय' है।

वज्रसूची प्रनक्ष्यामि शास्त्रमज्ञान भेदनम् ।
दूषणं ज्ञानहीनानां भूषणं ज्ञानचक्षुषाम् ।। 1 ।।

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यशूद्रा इति चत्वारो वर्णास्तेषां वर्णानां ब्राह्मण एवं प्रधान इति वेदवचनानुरूपं स्मृतिभिष्युक्तम् । तत्र चोद्यमस्ति को वा ब्रह्मणोनाम किं जीवः किं देहः किं जातिः किं ज्ञानकिकर्म किं, धार्मिक इति ।। 2 ।।

तत्र प्रथमों जीवों ब्राह्मण इति चेत्तन्न । अनीतानागता नेकदेहानम्

जीस्यैकरूपत्वात् एकस्यापि तमवशादनेकदेहसंभवात् सर्वशरीराणां जीवस्यैकरूपत्वाच्च। तस्मान्नजीवों ब्राह्मण इति।

चित्त सदानन्दरूप, सब की बुद्धियों के साक्षी रूप, वेदान्त द्वारा जानने योग्य, अनन्त रूप ब्रह्मा को मै नमस्कार करता । मै बज्र सूची उपनिषद का प्रवचन करता हूॅ जो अज्ञान का नाश करने वाली है । ज्ञानर्हन के लिये दूषण रूप प्रतीत होगा और ज्ञान नेत्र रखने वाले को भूषण स्वरूप है । ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ण कहे गये है, जिनमें ब्राह्मण प्रधान है, ऐसा वेद का वचन है और स्मृतियों में भी कहा गया है । यहॉ प्रश्न यह है कि ब्राह्मण कौन है ? क्या यह जीव है ? अथवा देह अथवा जाति है, अथवा ज्ञान है, अथवा कर्म है, अथवा वह धार्मिकता है । ।।1-2।।

इसमें अगर सबसे पहले जीव को ब्राह्मण कहा जाय तो यह नहीं हो सकता । भूत और भविष्यकाल में अनेक शरीरों में जीव हुए है, अथवा होगें वे सब एक से ही है। जीव एक है कर्मों के अनुसार अनेकों देहों से उसका जन्म होता है, सब शरीरों में जीवन में एकता रहती है। इसलिये जीव ब्राह्मण नहीं हो सकता । ।।3।।

तर्हि देहो ब्राह्मण इति चेतन्क। आचाण्डालादिपर्य्यन्तानां मनुष्याणां पांचभौतिकत्वेन देहस्वैकरूपष्वात् जरामरणधर्मादिसाम्यदर्शनात्। ब्राह्मणः श्वेतवर्णः क्षत्रियो रक्तवर्णो वैश्य पीतवर्ण सूद्र कृष्णवर्णइति नियमाभावत् पित्रादिशरीरदहने पुत्रादीना ब्रह्महत्यादिदोषसभा उच्च। तस्मात्र देहो ब्राह्मण इति ।।4।।

'तर्हि जातिर्ब्राण' इति चेतन्ना तत्र जात्यन्तरजन्तुष्वनेयजातिसभवात्। महर्षयो वहवः सन्ति। ऋष्यश्रृग्डों मृग्याः कौशिकः कुणातः जाम्वको जाम्बूकात् वाल्मीको वल्मीकात् व्यासः कैवर्तकन्यकायाम् शशषष्ठात् गौतमः वशिष्ठ उर्वश्यार्म् अगस्तः कयशे जात इति श्रुतत्वानः एतेषां जात्या विनाऽप्यग्र ज्ञानप्रतिपादिता ऋषयों बहवः सन्ति। तस्मान्न जाति ब्राह्मण इति। ।।5।।

तब क्या देह ब्राह्मण है ? यह भी नहीं हो सकता। चाण्डाल से लेकर समस्त मनुष्यों के शरीर एक से पच्चभौतिक होते है । उसमें वृद्धावस्था, मरण, धर्म, अधर्म एक से ही होते है। ब्राह्मण गोरा, क्षत्रिय लाल, वैश्य पीला और शुद्र काला ही हो ऐसा कोई नियम देखने में नहीं आता। औरन पिता भाई आदि के शरीर की दाह क्रिया करने से दुख आदि को ब्रह्महत्या आदि का दोष लगता है इसलिये देह ब्राह्मण नहीं हो सकता। ।।4।।

तब क्या जाति ब्राह्मण है ? यह भी नहीं हो सकता क्योंकि भिन्न जाति वाले प्राणियों से भी अनेक महर्षियों की उत्पत्ति कहीं गई है । जैसे मृगी से श्रृङ्गी ऋषि, कुश से कौशिक, जम्बुक से जाम्बुक, बांबी से वाल्मीक, मल्लाह की कन्या से व्यास, शशक की पीठ से गौतम, उर्वशी वैश्या से वशिष्ठ, कलश से अगत्स्य ऋषि, की उत्पत्ति कहीं जाती है। इस प्रकार से ऋषि बिना जाति के पूर्व में ज्ञानी हुए है। इसलिये जाति को ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता। ।।5।।

तर्हि ज्ञानं ब्राह्मण इति चेतन्नः। क्षत्रियत्दतोऽपि परमार्थ दर्शिनोऽभिज्ञा वहवः सन्ति। तस्मान्न ज्ञानं ब्राह्मण इति। ।।6।।

तर्हि कर्म ब्रह्मण इत चेतन्य। सर्वेषां प्राणिनां प्रारब्ध संचितागामिकर्मसाधुर्म्यदर्शनात्। कर्माभिप्रेरिताः सन्तो जनाः क्रियाः कुर्वन्तीति। तस्मान्न कर्म ब्राह्मण इति।

तर्हि धार्मिको ब्राह्मण इति चेतन्य। क्षात्रियादयो पिरण्यः दात्तादों वहव सन्ति। तस्मान्न धार्मिको ब्राह्मण इति।

तर्हि को वा ब्राह्मणों नाम। यः कश्चितदात्मनमद्वितीयं जातिगुणक्रियाहीनं शडूमिषडभावेत्यांदिसर्व जेषरहितं सत्य ज्ञानानन्दानन्तस्वरूपं स्वयं निर्विकल्पमशेष कल्पाथारमशेष भूतान्तर्यामित्वेन वर्तमानमन्तर्वहिश्चाकाशावदनुस्यतमखण्डानन्द स्वभावमप्रमेयमच्भवेकयेकवेद्यमपरोक्षतया भासमान करतलामलकम् साक्षादपरोक्षी यकृत्य कृतार्थतया कामरागादिदोष रहितः शमदमादि सम्पन्नो

भावमात्सर्यतृष्णाऽऽशामोहारहितो दम्भा हकारादिभिरसंस्पृष्ठचेता वर्तत एत्मुक्तलक्षणो यःस एव ब्रह्मण इति श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासानामभिप्रायः अन्यथा हि ब्राह्मणत्वसिद्धिर्नास्त्येव सच्चिदानन्दमात्मनमद्वितीय ब्राह्म भावयेदात्मानं सच्चिदान ब्रह्मण भावयेदित्यपनिषद् ।

तब क्या ज्ञान ब्राह्मण है? यह भी नहीं कहा जा सकता। बहुत क्षत्रिय भी परमार्थ के ज्ञाता और ज्ञानी हुए है। इसलिये ज्ञान से ब्राह्मण होना नहीं कहा जा सकता।।6।। तब क्या कर्म ब्राह्मण होता है। वह भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कभी प्राणियों के प्रारब्ध संचित और आगामी कर्मो मे एक सामान दिखाई देता है। और कर्म से प्रेरित होकर ही जीव क्रिया करता है। इसलिये कर्म ब्राह्मण नहीं हो सकता। ।।7।। तब क्या धार्मिकता से ब्राह्मण होता है? यह भी नहीं, क्योंकि बहुत से क्षत्रिय आदि सुवर्ण का दान करते रहते है, इसलिये धार्मिक व्यक्ति हीं ब्राह्मण नहीं हो सकते। ।। 8।। तब ब्राह्मण किसको कहा जाय? जो आत्मा के द्वैत भाव से रहित हो, जाति गुण, और क्रिया से रहित हो छः ऊर्मी और छः भावों आदि सब प्रकार के दोषो से रहित हो, सत्य ज्ञान, आनंद, अनंत, स्वरूप स्वयं निर्विकल्प रहने वाला, अशेष कल्पों का आधार रूप, सब भूतों का अन्तर्यामी, भीतर और बाहर आकाश के समान व्याप्त, अखण्ड आनंद वाला, अप्रमेय, अनुभव से ही जानने योग्य, अपरोक्ष भासने वाले आत्मा का करतलगत आमले की तरह साक्षात्कार करने वाला, कृतार्थ होकर काम, राग आदि दोषों से रहित, शम, दम, आदि से युक्त मात्सर्य तृष्णा, मोह आदि से रहित दम्भ अहंकार आदि से चित्त को सर्वथा पृथक रखने वाला ही ब्राह्मण कहा जा सकता है श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास का ऐसा ही अभिप्राय है इसमें सच्चिदानन्दरूप और अद्वितीय है ऐसे ब्रह्म भाव से मनुष्यों को ब्राह्मण मानना चाहिये। ऐसे ही परिवेश में काल गणनों के अनुसार आज से लगभग 1565108 वर्ष पूर्व परम तेजस्वी भगवान परशुराम का जन्म हुआ जिसकी कथा इस प्रकार है।

कान्यकुब्ज देशवासी महाराज गाधि अपनी राजधानी छोड़ वनवासी हो गए वहीं पर उनके अप्सरा के समान सुन्दर एक कन्या पैदा हुई जिसका नाम सत्यवती रखा गया विवाह योग्य होने पर राजाधि कुलरीति का निर्वहन करते हुए भृगुपुत्र ऋचीक से कन्या शुल्करूप में 1 हजार (श्वेत, पाण्डुर) 1 कान एक तरफ काले रंग के घोड़े लेकर अपनी पुत्री सत्यवती को पत्नी रूप में ऋचीक को दे दिया।

कुछ काल व्यतीत होने के बाद महात्मा भृग, पुत्र तथा पुत्र वधू को देखने आए अतिथि सत्कार स्वीकार करने के बाद महर्षि भृगु ने पुत्रवघू से वर याचना करने को कहा तुम्हारी इच्छानुसार वर प्रदान करूंगा। सत्यवती ने अपने तथा अपनी माता के लिये (जो अभी तक पुत्रहीन थी) पुत्र प्राप्ति कर वर मांगा ।

प्रसन्न होकर महात्मा भृगु ने अपनी पुत्रवधु (सत्यवती) को गूलर (उमरि) तथा पुत्रवधु की माता को पीपल वृक्ष का आलिंगन करने को कहा। तथा ऋतुकाल में स्नान करने के पश्चात जो चरू (खीर) तैयार कर तुम्हें व तुम्हारी माता के लिये बनाया है। अपनी अपनी चरू खा लेना यह कहकर ब्रह्मर्षि भृगु चले गए। तत्पश्चात माता की कुटिल नीति के कारण वृक्षों का आलिंगन तथा चरू भक्षण में उलट फेर कर दोनों ने चरू भक्षण किया। यह भेद ब्रह्मर्षि भृगु ने समझकर पुनः पुत्र के आश्रम पर आए और पुत्रवधू से कहा भद्रे। तूने वृक्ष अलिंगन तथा चरू भक्षण में उलट फेर कर दिया है, इसलिये तुम्हारे कोख से ब्राह्मण पुत्र होकर भी क्षत्रियोचित आचार-विचार वाला होगा तथा तुम्हारी माता का पुत्र क्षत्रिय होकर भी ब्राम्हणों चित आचार-विचार वाल महापराक्रमी महात्माओं के मार्ग का अवलम्बन करेगा। सत्यवती ने हाथ जोड़कर विनय किया कि आप त्रिलोकी का उलट फेर कर सकते है, मेरे उदर में पल रहे गर्भस्थ शिशु के स्वभाव आचार-विचार में परिवर्तन कर दें, मेरा पौत्र भले ही

इस स्वाभाव व आचरण का हो। तथास्तु कहकर ऋषि चले गए और भविष्य में ऐसा ही हुआ (महा. तीर्थ 19-41) एक अन्य कथानक में भृगु वंशी ऋचिक ने अपनी पत्नी सत्यवती व सासु के लिये पुत्र देने वाला वेदमंत्रो से अभिमंत्रित कर दो चरू बनाया तथा अपनी पत्नी को चरू देकर इसे तुम खाना तथा दूसरे हाथ वाला अपनी माता को देना, ऐसा कहकर महर्षि ऋचीक तपस्या करने वन को चले गये। इधर सत्यवती ने माता से भेंट कर पुत्र प्राप्ति दोनों चरू माता को दिया माता ने मन में कपट भाव रखकर पुत्री वाला चरू स्वतः खा लिया और अपना भाग पुत्री को खिला दिया पुत्र दोनों को प्राप्त हुए किन्तु वंश परम्परा से भिन्न अनुनय विनय पश्चात् विष्णु अंश भूत उन दोनों चरूओं में उलटफेर होने के कारण सत्यवती के गर्भ से शांत स्वभाव जगदाग्नि का जन्म हुआ।

कुछ काल व्यतीत होने के उपरांत इच्वाकुवंशी नरेश रेणु (प्रसेन) की पुत्री कामली (रेणुका) का विवाह महर्षि जमदाग्नि मुनि से हुआ। काल गणना के अनुसार आज से लगभग 1565108 वर्ष पूर्व जमदाग्नि नंदन भगवान परशुराम का जन्म गंगा की तलहटी के कान्यकुब्ज देश में ऋचीक मुनि के आश्रम में वैशाख मास शुक्ल पक्ष अक्षय तृतीया पुनर्वसु नक्षत्र रात्रि के प्रथम याम (पहर) में रेणुका के गर्भ से स्वयं हरि ने अवतार लिया, उस समय अपने स्थान से उच्च के छः ग्रह तथा मिथुन में राहु ग्रह था। देवों ने दुम्दुभी बजाई तथा ऋचीक मुनि के आश्रम पर आकश से फूलों की वर्षा हुई। आपसे बडे चार भाई और थे, जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार है-

1. रूमण्वान
2. सुषेण
3. वसु
4. विश्वावसु

जातक कर्म बाद आप धीरे-धीरे बढ़ने लगे वाल्यकाल बीतने पर घर

पर ही रहकर अपने पिता श्री जगदाग्नि मुनिसे वेद धनुर्वेद तथा चारों प्रकार के अस्त्र विद्या तथा अन्य विद्याएं प्राप्त की। तदन्तर विप्रवर राम शालग्राम पर्वत के शिखर पर तपस्या करने के लिये गए वहॉ पर उन्होनें परमतेजस्वी ब्रह्मर्षि कश्यपजी का दर्शन किया तथा उनका पूजन किया तब उन्होनें राम को विधिपूर्वक अविनाशी वैष्णव मंत्र का उपदेश दिया। महात्मा कश्यप से मंत्र का उपदेश पाकर उन्होनें रात दिन षडकक्षर महामंत्र का जप करते हुए सर्वव्यापी कमलनयन लक्ष्मीपति विष्णु का स्तवन किया। भगवान विष्णु प्रसन्न होकर अपना परसु, वैष्णव महाधनुष प्रदान करके उनसे कहा मै तुम्हें अपनी शक्ति प्रदान करता हूँ, तुम मेरी शक्ति से आविष्ट होकर पृथ्वी का भार उतारो और देवताओं का हित साधन के लिये दुष्ट राजाओं का वध करो । इस समय पृथ्वी पर बहुत से मदोन्मन्त राजा एकत्र हो गए है । उन्हें मार कर समुद्र, पर्वत सारी पृथ्वी अपने अधिकार में कर धर्मपूर्वक इसका पालन करो। समय आने पर मेरी ही कृपा से मेरे ही परमधाम को प्राप्त हो जाओगे । भगवान विष्णु के अन्तर्धान होने पर भगवान राम भी अपने पिता के आश्रम पर लौट आए ।

माता का वध

उदर पोषण हेतु एक दिन सभी भाई समिधा, मूल, कन्द तथा फल ।।1।। **फूल** के बाद जो फल लगता है, उसे **फल** कहते है जैसे-आम, जामुन, बेल, मिर्चा, भांटा, तेंदू, कटैया, चार, आवंला, कैथा, बेल, बेर, बरारी, करौंदा, महुआ, अमलताल, अर्जुन, प्लास, काजू, अमरूद, अंगूर, लीची, नेबू, सेमा, सेमी, भिन्डी, इमली, पपीता आदि। ।। 2।। **मूल**-अपने रूप में प्रकट होते है उन्हें मूल कहते है, जैसे केला, कटहल, वट, पीपल, वड़हर, कदम्ब, कठूमर, लौकी, कुम्हणा, रेरूआ, तर्रोई, खजूर, छोहारा, नारियल, सुपाड़ी, ऊमर, अननास, आदि। ।। 3।। **कंद**-आलू, गाजर, मूली, खनीमा, अरूई, सूरन, चुकंदर, मूंगफली, लक्षिमन, कन्द, कजकन्द, कपासा, हर्दी, अदरख, कांदा, सतावर, करिहारी, लहसुन, प्याज़, कोगदा आदि। ।। 4।। **फूल** में महुआ लेने वन में चले गए। माता रेणुका नियम पूर्वक उत्तम व्रत का पालन करने वाली गंगा नदी तट पर गई स्नान कर घड़े में जल लेकर लौटी तभी उनकी निगाह मार्तिकाबत देश के राजा चित्ररथ पर पड़ी जो कमलों की माला धारण करके अप्सराओं के साथ तथा एक अन्य कथानक के अनुसार अपनी पत्नी के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। गन्धर्व वैसे ही बहुत सुन्दर होते है। तदुपरांत कामवासना से मदोन्मत होकर रानी से लिपट रहा था।

यह दृश्य देखकर रेणुका ने उससे मिलने की इच्छा किया। उस समय इस मानसिक दोष से द्रवित होकर जल में गिर कर बेहोश हो गई। स्वस्थ्य होने पर उन्होनें अपने आश्रम में प्रवेश किया। ऋषि ने देरी का कारण पूंछा इस पर रेणुका ने मस्तक नीचे कर निरूत्तर रहीं। ऋषि ने अपने तपो बल से सब कुछ ज्ञात कर लिया तथा महर्षि ने धिक्कारपूर्ण वचनों द्वारा उनकी निंदा की। उसी समय उनका ज्येष्ठ पुत्र रूमण्वान वहा आ गये। फिर क्रमशः सुषेण, वसु, विश्वासु भी आ पहूँचे। भगवान जगदाग्नि ने बारी-बारी से उन सभी पुत्रों को

यह आज्ञा दी कि तुम अपनी माता का वध कर डालो, मातृस्नेह उभर आने की वजह से वे सभी पुत्र जड़ वत खड़े रहे। महर्षि ने कुपित होकर इन पुत्रों को श्राप दे दिया। श्राप ग्रस्त होकर वे पुत्र अपनी विचार शक्ति खो बैठे। तथा मृग या पक्षियों की भांति जड़ बुद्धि हो गए। शत्रु पक्ष के बीरों का संहार करने वाले परशुराम जी सबसे पीछे आश्रम पर आए, उस समय महातपस्वी जगदाग्नि ने उनसे कहा-बेटा। अपनी इस पापिनी माता को अभी मार डालो। इसके लिये मन में किसी प्रकार का खेद मत करो। परशुराम जी ने फरसे से अपनी माता का मस्तक काट डाला। एक अन्य कथानक में माता के साथ भाइयों को भी मार डाला। इससे महात्मा जमदाग्नि का कोप शांत हो गया और बेटा परशुराम से कहा यह कार्य दूसरों के लिये बहुत कठिन है, तुम धर्म के ज्ञाता हो, तुम्हारे मन में जो कामनाएॅं हो, उन सब को मांग लो।

तब परशुराम जी ने कहा-पिता जी। मेरी माता जी जीवित हो जायें तथा मेरे द्वारा मारे जाने की बात उन्हें याद न रहें तथा मेरे सभी भाई स्वस्थ्य चित्त हो जायें तथा उन सभी को मानस-पाप स्पर्श न कर सकें तथा युद्ध में मेरा कोई सामना करने वाला न हो, तथा मै दीर्घज़ीवी होऊँ। महातपस्वी जमदाग्नि ने ऐसा ही होगा का वर देकर सभी कामनाएं पूर्ण कर दी।

महात्मा जगदाग्नि के द्वारा सारी अभिलाषाएं पूर्ण होने के बावजूद भी मातृहन्ता परशुराम जी का मन खिन्न रहता था ? मन की शांति के लिये कैलाश पर्वत पर जाकर - ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए -

ब्रह्मचर्य व्रत

1. **स्मरण कीर्तन, केलि क्षणम् गुह्मभाषणम् ।**
संकल्पोऽधावसायश्च्य किया निवृत्तिरेवच ।।

एतन्मैथुन मष्टांग प्रवदानी मनीषिणः । (अग्निपुराण) स्त्री को स्मरण करना, स्त्री संबंधी बात करना, स्त्री से हंसी करना, स्त्री को देखना, स्त्री से गुप्त मंत्रणा करना, स्त्री से मिलने का संकल्प होना, कार्य में तत्पर हो जाना, कर्म से निवृत्त होना, ये मैथुन के आठ अंग ऋषियों ने कहें है - इन सबको मनसा वाचा, कर्मणा से त्याग कर उमाबल्लभ महेश्वर की आराधना में स्थित हुए। बहुत वर्षों तक तपस्या, इन्द्रिय संयम मनोविग्रह, पूजा, उपहार, भेंट, अर्पण, होम, और मन्त्र-जाप आदि साधनों द्वारा शिव की आराधना की, उनकी अधिक और मनः संयम की तपस्या से संतुष्ट हो सबका कल्याण करने वाले महादेव जी ने उनके मनोगतभाव को जानकर उन्हें अपने दिव्य शरीर का प्रत्यक्ष दर्शन कराया और बोले - राम, तुम्हारा कल्याण हो, मै तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ । तुम क्या चाहते हो, तुम्हारी सभी कामनाएं पूर्ण होगी, परंतु पहले अपने हृदय को शुद्ध करो, तुम्हें सब कुछ प्राप्त हो जायेगा। भगवान शिव को मस्तक झुकाकर प्रणाम किया तथा शुद्ध हृदय से उन देवेश्वर से सभी दिव्यास्त्र प्राप्त किये। उन्ही दिनों दैत्य लोग देवताओं पर धावा बोल दिया तथा उन्हें परास्त कर दिया। फिर देवता लोग घबराकर भगवान सदा शिव के पास पहुँच कर आप बीती सुनाई। इस पर क्रुद्ध होकर भगवान शंकर ने परशुराम को बुलाकर, दैत्यों का वध करने की आज्ञा दी, उनकी आज्ञा शिरों धार्य कर राम ने दैत्यों के पास जाकर उन्हें सावधान किया, परन्तु दैत्यों के ना मानने पर उन्हें संग्राम की चुनौती दिया, रण भूमि में अधिकांश का वध कर दिया तथा कुछ को मारपीट कर भगा दिया, इस समर में उन्हें भी चोंटे आई, भगवान शंकर ने उन्हें स्पर्श कर सारी व्यथा दूर कर दिया, उनके शरीर के सारे घाव भर गये।

भगवान शंकर ने यह भी कहा कि तुम्हारी मानवोचित कर्म नस्ट हो गये, अब तुम देव समान हो गये। मै तुम्हें सारी विद्याएं, सिद्धियां, निधियाॅ, छवों शास्त्र, अंगों सहित चारों वेदों की ऋचाएं प्रदान करता हूॅ ।

विद्याएं - ब्रह्मज्ञान, रसायन विद्या, गान विद्या, बेद पाठ, ज्योतिष विद्या, व्याकरण शास्त्र विद्या, तैरने की विद्या, वैद्यक, कृषि विद्या, कोक विद्या, अश्वारोहण विद्या, नृत्य विद्या, ज्ञानचातुरी विद्या।

निधियाॅ - महापद्म, पद्म, कच्छप, मटर, मुकुंद, शंख, खर्व, नील, कुन्द।

सिद्धियाॅ - आणिमा, महिमा, लाधिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्रकाम, ईशता, वशित्व।

शास्त्र - मीमान्साशास्त्र, वैशोषिकशास्त्र, न्यायशास्त्र, सांख्य शास्त्र, वेदांत शास्त्र, योगशास्त्र।

वेद - ऋगुवेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वेद।

वेदों के छः अंग - व्याकरण, शिक्षा, ज्योतिष, छन्द, निरूक्त तथा वर्ण।

भगवान शंकर से सम्मानित होकर राम अपने पिता के आश्रम पर वापस आ गए। भगवान वामन के बाद परमात्मा विष्णु का फिर से जो अवतार हुआ वह दत्तात्रेय के नाम से विख्यात है, उन्हीं भगवान दत्तात्रेय की उपासना कर, अनूपदेश (माहिष्मती) का राजा कार्तवीर्य अर्जुन (हैहयवंसी) वलावल से संपन्न होकर प्रथम तो प्रजा का पुत्र वत पालन किया किन्तु कुछ काल व्यतीत होने पर उसने घमण्ड, में भर कर दत्तात्रेय जी जिन्होनें अपने जीवन काल में 24 गुरू (पृथ्वी, जल, वायु, मृग, चन्द्रमा, सूर्य, अग्नि, आकाश, वृक्ष, समुद्र, भँवरा, सर्प, हाथी, मछली, पतंगा, चील्ह, अजगर, वेश्या, बाण बनाने वाला, कबूतर, जोणा मकडी, मधुमक्खी, कन्या, शरीर) बनाये थे, के द्वारा प्राप्त रथवदों भुजाओं के बदले रणक्षेत्र में हजारों भुजाएॅ हो जाने का वर प्राप्त कर प्रजा पर अनीत करना, शुरू कर दिया, इसी परिपेक्ष्य में एक दिन अपने सैनिकों को साथ लेकर वन में मृगया करने को गया। घूमते-घूमते जमदग्नि जी के आश्रम भृगु कक्ष पर पहुच गया, उस समय आश्रम पर

माता रेणुका थी, उन्होनें यह समझकर कि यह राजा अर्जुन है, अपना धर्म समझ कर आतिथ्य सत्कार किया, किन्तु कार्तवीर्य अर्जुन युद्ध के मद से उन्मत होकर उनका आतिथ्य सत्कार ग्रहण नहीं किया, उल्टा आश्रम के सभी वृक्षों को तोड़ डाला व आश्रम को तहस नहस कर होम धेनु के बछड़े का अपहरण कर अपनी राजधानी को चल पड़ा। (महावन 19-20, 21) परन्तु रास्ते में अपने मंत्री की मंत्रणा से कामधेनु गौ का अपहरण करने के लिये सैनिकों सहित मंत्री को पुनः भेजा । यहॉ पर यह श्लोक चरितार्थ हुआ -

1. **अंत्रदयोऽग्निर्वहनतः क्षत्रमश्मनो लोहमुल्पितम ।(महा.शा.24)**
तेषां सर्वत्रगं तेजः स्नाषु योनिषु शाम्यति ।।

(अग्नि, जल से, क्षत्रिय ब्राह्मण से, और लोहा पत्थर से प्रकट हुआ है । इनका तेज अन्य स्थानों पर अपना प्रभाव दिखाया है, परंतु अपनी ही जननी से टक्कर लेने पर स्वयं ही शान्त हो जाते हैं।)

2. **अयो हन्ति यदाश्मानमग्निना वाहिरहन्यते ।**
ब्रह्म च छत्रियो द्वेष्टि तदा शीदन्ति ते त्रयः ।।(महा.शा.25)

(जब लोहा पत्थर पर चोट करता है, आग जल को नष्ट करने लगती है, और क्षत्रिय ब्राह्मण से द्वेष करने लगता है, तब ये तीनों दुख उठाते है)

तब तक जमदाग्नि मुनि भी आश्रम पर आ चुके थे, राजमंत्री कामधेनु गौ को जबरदस्ती ले जाना चाहा, जिसका, विरोध जमदाग्नि मुनि तथा रेणुका ने किया इस पर कुपित होकर मंत्री ने जमदाग्नि मुनि की हत्या कर गौ को लेकर चल दिया, त्यों ही वह दिव्य गौ आकाश मार्ग से इन्द्र के पास चली गई। राजा मन ही मन क्षुब्ध होकर महिष्मती नगरी को लौट गया। (नर 20-28) इधर माता रेणुका कुररी की तरह विलाप कर अपनी कुक्षि (उदर) में 21 घूसा मारकर प्राण की आहुत देने को तत्पर थी, तभी समिधा लेकर भगवान परसुराम ने आश्रम में प्रवेश किया और रोती हुई माता से लिपट कर उन्हें आश्वासन दिया सारा वृत्तान्त मालुम कर पित्र हन्ता हैहयाधिपति अर्जुन

का सेना-पुत्र सहित वध करूंगा और आपने उदर पर 21 बार प्रहार किया है। इसलिये पृथ्वी को 21 बार क्षत्रियों से हीन करूंगा तत्पश्चात अन्य भाइयों सहित पिता का प्रेत संस्कार किया और उससे निवृत्त होकर अकेले ही अनूप देश पर चढ़कर कार्तवीर्य अर्जुन का पुत्र सेना सहित वध किया। इतने पर भी उनका क्रोध शान्त नहीं हुआ। पृथ्वी पर घूम-घूम कर मरने मारने पर तत्पर हुए चौंसठ करोड़ क्षत्रियों का वध किया तथा इसी तारतम्य में दन्तक्रूर नामक ब्रह्मदोही राजा का चौदह हजार सैनिकों सहित वध किया। गुणावती के उत्तर और खाण्डव वन से दक्षिण पर्वत से निकट वर्ती प्रदेशों में लाखों हैहयवंशी क्षत्रिय मारे गये। तदान्तर प्रतापी परशुराम ने काश्मीर दरद कुन्ति, क्षुद्रक, मालव, त्रिगर्त, मार्तिकावर्त, शिव, इन्द्रगोप (वीर बधूटी) आदि देशों के क्षत्रियों का संहार किया। क्षत्रिय ब्राह्मण द्रोही तथा रजोणुणी विशेष कर तमोगुणी हो गये थे।

माता रेणुका के आदेश (रोकने) पर इक्षवाकु वंश का नानाकुल होने के नाते बध नहीं किया। इस तरह से क्षत्रियों के रक्त से कितने ही तालाब भर गये। उनमें सामन्त पंचक नामक तीर्थ है। उनमें भरे हुए रूधिर से अपने पितरों का तर्पण किया, जिसे ऋचीक आदि पितरों में स्वीकार कर क्षत्रिय संहार विषय पर रोक लगाकर पितृगण अदृश्य हो गये। (स्क. जम.36/49)

तदन्तर प्रतापी जमदाग्नि कुमार ने पहले इस पृथ्वी का पुत्र व्रत पालन कर एक अश्वमेघ यज्ञ कर देवराज इन्द्र को प्रसन्न किया तथा अपने द्वारा जीती हुई सारी भूमि मरीच नंदन कश्यप को दान कर अपने वाण से समुद्र को 120 धनुष के पीछे ढकेल कर वहीं पर एक नगर बसाया तथा कश्यप को दान में देकर उन्हीं की आज्ञा से आप महेन्द्र पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे।

एक दन्त

श्री हरि का कवच धारण करके जब परशुराम ने पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिये तब वे अपने गुरूदेव शिव को नमस्कार करने और गुरू पत्नी अम्बा शिवा को तथा दोनों गुरूपुत्र कार्तिकेय तथा गणेश्वर को देखने के लिये कैलाश को चले। वे भृगुवंशी महात्मा मन के समान वेगशाली थे।

अतः उसी क्षण कैलाश पर जा पहुँचे। सामने ही शंकर जी का शोभाशाली रमणीय आश्रम दीख पड़ा, जो मणि निर्मित केवाड़, खम्भे और सीढ़ियों से शोभायमान तथा स्वर्णगंगा के तट पर उगे हुए परिजात वृक्ष समूहों से खचाखच भरा था। परशुराम ने उस आश्रम के प्रधानद्वार के दाहिनी ओर वृषेन्द्र को और वायीं ओर सिंह तथा नन्दीश्वर, महाकाल, भयंकर, पिगलाक्ष, विशालाक्ष, महावली, विरूपाक्ष, विकटाक्ष, विकटोदर, संहार भैरव, काल भैरव, कपाल भैरव, रूद्रभैरव, जटाधारी, योगीन्द्रो, यक्षो, किंपुरूषों और किन्नरों को देखा। उन्हें देखकर भृगुनंदन ने उनसे वार्तालाप किया। फिर वे नन्दकेश्वर की आज्ञा लेकर भीतर घुसे। वहाँ प्रधान पार्षद और क्षेत्रपाल रत्ननिर्मित सिंहासनों पर बैठे थे। महान बल पराक्रम से संपन्न भृगुवंशी परशुराम हाथ में फरसा लिए आगे बढ़े। उन्हें आगे बढ़ते देख गणेश ने कहा भाई ? तनिक रूक जाइये। इस समय महादेव निद्रा के वसीभूत होकर शयन कर रहे है। मै क्षण भर में उन ईश्वर की आज्ञा लेकर आता हूँ और तुम्हें लेकर अंदर चलूंगा। गणेश की बात सुनकर महावली परशुराम जो वृहस्पति के समान वक्ता थे, कहाँ - भाई ! मै ईश्वर को प्रणाम करने के लिये अंतःपुर में जाऊंगा और भक्ति पूर्वक माता पार्वती को नमस्कार करके तुरंत ही आश्रम पर लौट जाऊंगा। यों कहकर परशुराम गणपति के आगे खड़े हो गये। इस पर गणेश जी ने उन्हें बहुत समझाया कि इस समय भगवान शंकर और माता पार्वती अन्तःपुर में है। आपको वहाँ नहीं जाना चाहिये। परन्तु परशुराम जी हठ करते ही रहें । उन्होनें

अनेकों युक्तियों द्वारा अपना अंदर जाना निर्दोश बताया। यों दोनों में परस्पर विवाद होता रहा। गणेश जी विनय पूर्वक ही परशुराम जी को रोकते रहें पर जब परशुराम जी बल पूर्वक अन्दर जाना चाहा, तो गणेश जी ने रोक दिया रोकने पर परस्पर वाग्युद्ध और करताड़न होने लगा। अंत में परशुराम जी ने गणेश पर अपना फरसा उठा लिया, तब कार्तिकेय ने बीच में आकर उन्हें समझाया पर समझाने का कोई असर नहीं हुआ। परशुराम ने गणेश को धक्का मारकर गिरा दिया। गणेश ने उठकर परशुराम को बहुत फटकार लगाई। इस पर परशुराम ने पुनः कुठार उठा लिया। तब गणेश जी क्रुद्ध होकर अपनी सूड़ को बहुत लम्बा कर लिया, और उसमें परशुराम को लपेट कर वे घुमाने लगे। जैसे - छोटे सांप को गरूड़ उठा लेता है, वैसे ही अपने योग बल से शिव पुत्र गणेश ने उनको उठा कर स्तंभित कर दिया। और सप्तदीप - सप्तपर्वत, सप्तसागर, भूर्वलोक, स्वर्गलोक, जनलोक, तपोलोक, ध्रुवलोक, गौरी लोक - सम्भुलोक उनको दिखा दिया तथा सभी लोकों में घुमाने के बाद समुद्र में फेंक दिया। जब वे पानी में तैरने लगे तो पुनः अपनी सूड़ से उन्हें पकड़ कर उठा लिया और घुमाते हुए बैकुंठ दिखलाकर फिर गोलोकधाम में भगवान श्री कृष्ण के दर्शन कराये। उस समय भगवान रत्ना भरणों से विभूषित हो रत्न निर्मित सिंहासन पर आशीन थे। राधाजी उनके वक्ष स्थल से सटी हुई थी। तेज में करोड़ों सूर्यों के समान प्रभावशाली थे। दो भुजाएं थी। हाथ में मुरली शोभा पा रही थी। उनका दर्शन कराकर गणेश जी ने परशुराम के भ्रूण हत्या जनित पापों को दूर कर दिया। यों तो पाप जनित यातना भोगे बिना नस्ट नहीं होती, किन्तु परशुराम को थोड़ी ही भुगतनी पड़ी। वह तो सब भगवान कृष्ण के दर्शन से ही नष्ट हो गई । क्षण भर में परशुराम की चेतना लौट आई। वे भूतल पर गिर पड़े। उस समय उनका गणेश द्वारा स्तंभन भी दूर हो गया। तब उन्होनें अपने अभीष्ट देव श्री कृष्ण अपने गुरू शम्भू द्वारा दिये गये परम् दुर्लभ स्तोत्र और कबच का स्मरण किया और अपने अमोघ फरसे को जिसकी प्रभा ग्रीष्म

कालीन सूर्य की प्रभा से सौ गुनी अधिक थी और तेज में शिव तुल्य था। गणेश पर चला दिया। पिता के उस अमोघ अस्त्र को आते देख कर स्वंय गणपति ने उसे अपने बायें दांत पर रोक कर उसका वेग सहा, परंतु वह फरसा गणेश के दांत को मूल से काट कर भूमि पर गिरा दिया और पुनः परशुराम के हाथ में वापस आ गया। यह दृश्य देखकर वीर भद्र कार्तिकेय और क्षेत्रपाल आदि पार्षद तथा आकाश में देवगण महान भय से भीत होकर हाहाकार करने लगे। पृथ्वी थर्रा उठी, कैलाश वासी भय के सारे अचेत हो गये। शिव पार्वती भी अन्तः पुर से बाहर आ गये। पार्वती ने पुनः गणेश को जो उस समय खून से लतपथ थे। छाती से लगाकर रोने लगी तथा वीर भद्र कार्तिकेय से वस्तु स्थिति की जानकारी लेने लगीं। वास्तविकता की जानकारी होने पर पार्वती ने परशुराम को मारने के लिये उद्यत हो गई। तब परशुराम ने मन ही मन गुरू को प्रणाम कर अपने इस्टदेव श्री कृष्ण का स्मरण किया। तत्क्षण पार्वती और शंकर के मध्य एक बौना बालक ब्राह्मण वेश में प्रगट हुआ, जिसकी प्रभा श्री कृष्ण के समान थी। वृषभ देव ने उन्हें पहचान कर अर्ध पद्य से पार्वती समेत उनकी पूजा की, उनकी पूजा से प्रसन्न होकर अद्भुत बालक ने उनसे कहा, ये परशुराम देव जनित कार्य में उद्यत है। इनके अपराध को आप दोनों क्षमा कर दें। अभी देव हित के बहुत से काम होना बाकी है। गिरिराज किशोरी तुम्हारे लिये जैसे गणेश व कार्तिकेय है। निःसंदेह उसी प्रकार भृगुवंशी परशुराम भी है। सर्वज्ञ इनके प्रति तुम्हारे अथवा शंकर जी के स्नेह में भेदभाव नहीं है। अतः माता सब पर विचार कर जैसा उचित समझो वैसा करो। पुत्र के साथ पुत्र का यह विवाद तो देवदोश से घटित हुआ है। भला दैव को मिटाने में कौन समर्थ हो सकता है। क्योंकि दैव महावली है। वत्से, देखो तुम्हारे पुत्र का एक दन्त नाम वेदों में विख्यात है। वरानने सभी देव उसे नमस्कार करते है। ईश्वरि सामवेद में कहे हुए अपने पुत्र के नामॉस्टक स्तोत्र को ध्यान देकर श्रवण करो, जो संपूर्ण विघ्नों का नाशक है। माता तुम्हारे पुत्र के गणेश, एकदन्त,

ऋद्यु के मध्य हेरम्ब, विघ्ननाषक, लम्बोदर, सूप कर्ण, गजानन, और गुहाग्रज - ये आठ नाम है। यह स्तोत्र सभी स्तोत्रों का सारभूत और सम्पूर्ण विघ्नों का निवारण करने वाला है। ऐसा कहकर वह बालक अदृश्य हो गया। इधर भगवान परशुराम जगतमाता पार्वती की वंदना कर रोने लगे। इस पर भगवती दुर्गा ने उन्हें अभय का वरदान देती हुई बोली - हे वत्स तुम अमर हो जाओ। बेटा अब शांति धारण करो, शिव की कृपा से सदा सर्वत्र तुम्हारी विजय हो। यों कहकर पार्वती हर्षित हो परशुराम को शुभ आर्शीवाद देकर अन्तः पुर में चली गई। तदन्तर महाभाग परशुराम गणेश का पूजन करके तथा भगवान शंकर का स्तवन कर तपस्या के लिये वन को चले गये।

श्री राम चंद्र जी से भेंट

कहते हैं, श्रृष्टि नियन्ता इस धरा पर किसी खास प्रयोजन से अवतरित होता है और पूर्व से तय कार्य को सम्पादित कर पुनः अपने मूल रूप से समाहित हो जाता है। इसी कड़ी में दैत्यराज (दानव) कुलोत्पन्न राजा वलि को पराभूत निस्त्रेज करने के लिये बावन रूप धारण किये। पुनः आसुरी सम्प्रदाय के अभ्युदय होने पर सारी मर्यादाएं नस्ट हो चुकी हैं। वेद, उपनिषद प्रायः समाप्त होने लगे। उनकी रक्षा आपने दत्तात्रेय नाम से अवतरित होकर सामाजिक मर्यादायें पुनः स्थापित कर वेदों को कई भागों में विभक्त कर पुनः सामाजिक ताना वाना स्थापित किया। कुछ काल व्यतीत होने पर इस वसुन्धरा पर क्षत्रियों का वैभव स्थापित हुआ। वे उदण्डता के साथ अत्याचारी आततई।

अग्रिदो गरवश्चैबे शस्त्रपाणिर्धनापहाः।

क्षेत्रदारापहती च षडेते हयततापिनः ।।(बशि. स्मृ.-3-99)

(आग लगाने वाला, विष देने वाला, हाथ में शस्त्र लेकर मारने को उद्यत धन हरण करने वाला, जमीन छीनने वाला, और स्त्री का हरण करने वाले हुए) पृथ्वी इनके पाप से बोझिल हुई, प्रजापति की शरण जाकर क्षत्रियों के क्रियाकलापों का वर्णन कर शांति की याचना किया। प्रजापिता ने नियंत्रक के रूप में क्षत्रिय संहारक राम (परशुराम) को भेजा। यह भी कार्य सम्पादित होने के बाद इस पृथ्वी पर फिर से देव द्रोहियों का जन्म हुआ। उनका दमन करने के लिये इसी चौबीसवें त्रेता युग में ही भगवान विष्णु राजा दशरथ की साठ हजार वर्ष आयु समाप्त होने के उपरांत महर्षि वशिष्ट व ऋगी-ऋषि की कृपा से राम नाम से पुत्र रूप में प्रगट हुए। 12 वर्ष की अवस्था में आप (मिथिला) पुरी में राजा जनक के यहां जाकर उनकी प्रतिज्ञानुसार भगवान शंकर का आजगव नामक धनुष जो निमि वंशी राजा देवरात के पास धरोहर रूप में रखा था। तोड़ दिया तथा आदि शक्ति आयोनिजा जगत जननी सीता

को पत्नी रूप में ग्रहण किया। धनुष टूटने के भयानक शब्द को सुनकर महेन्द्र पर्वत पर तपस्यारत भगवान परशुराम अचंभित हुए तथा अपने तपोवल से भयानक शब्द का आशय समझ शस्त्रों से निहित हुए फिर से क्षत्रिय संहारक वैष्णव धनुष तथा फरसा उठाकर चल दिए। जनकपुरी से विवाहोपरांत महारजा दशरथ अपने पुत्रों व गुरू वशिष्ट तथा बरातियों के सहित अयोध्या जा रहे थे अचानक **बवंडर**- आधी तुफान असमयिक वर्षा तथा अन्य अपशकुन होने लगे जिन्हें देखकर महाराज दशरथ खिन्न मन तथा उदास होकर महर्षि वशिष्ट से इन अपशकुनों के विषय में पूछा। वशिष्ट जी ने बताया कि कुछ संकट पड़ने के संकेत है। साथ ही ये जो मृगमाला दाहिने दिशा की तरफ जा रहे हैं। यह भी सूचित कर रहे हैं कि संकट आवेगा परंतु उसका निराकरण भी होगा। थोड़ी ही दूर और जाने पर सामने एक ज्योति पुंज दिखाई दिया, जिसमे फरसा उठाए भगवान परशुराम दिखाई पड़े। जिन्हें देखते ही महाराज दशरथ हतप्रभ हो गए और मन ही मन कहने लगे ये भृगुवंशी ऋचीक नंदन राम तो इस पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन कर अपने पितरों की आज्ञा से शस्त्रों से निहित हो चुके है। फिर इनका शस्त्र उठाना क्या मेरे वंश विनाश की सूचना है।

सभी की अवमानना करते हुए केवल राम को इंगित कर बोले महाबाहु राम मेरी बात सुनो। मै बहुत से क्षत्रियों का संहार कर भूमि ब्राह्मणों को दान में देकर तपस्या करने चला गया था परंतु तुम्हारे कीर्ति और वल की ख्याति सुनकर यहॉ तुमसे युद्ध करने को आया हूँ। यद्यपि इक्ष्वाकुवंश के क्षत्रिय जो मेरे नानाकुल में उत्पन्न हुए है, मेरे वध्य नहीं है तथापि किसी भी क्षत्रिय का बल और पराक्रम सुनकर उसका सहन करना असंभव है। रघुवंशी वीर मैनें सुना है। तुमने शंकर जी के दुर्धर्ष धनुष को तोड़ डाला मेरे हाथ का वैष्णव धनुष भी उसी के समान शत्रुओं का संहार करने वाला है। तू पराक्रम से इसकी प्रत्यंचा चढ़ाकर कान तक खींचो। इस बात को सुनकर परमप्रतापी भगवान श्री रामचन्द्रजी ने यह धनुष उनके हाथ से ले लिया।

साथ ही उनसे अपनी वैष्णवी शक्ति को खीच लिया। तथा बोले मै दिव्य नेत्र प्रदान करता हूँ तुम मेरा दर्शन करो। तब परशुराम ने रामचन्द्र के शरीर में, आदित्य, वसु, रूद्र, साध्यं, मरूतसमूह, पितृ, अग्नि, नक्षत्र, ग्रह, गंधर्व, राक्षस, पशु, नदी, तीर्थ, ऋषि, ब्रह्ममूत, सनातन लोक सब देवर्षि, समुद्र, पर्वत, वेद, उपनिषद, यज्ञ, ऋक्र, साम, संपूर्ण, धनुर्वेद, देखने लगे, उसी समय भगवान राम ने कर्ण पर्यन्त खीचे हुए बाण को छोड दिया, उस समय सब जगत उलका और अशनि से व्याप्त हो गये। परशुराम को निठ्ठल करके उनका तेज छीनकर वह वाण पुनः श्री राम के पास वापस आ गया। शक्ति से वियोग होते ही भगवान परशुराम कर्म भ्रष्ट ब्रह्मण की भांति वीर्य और तेज से हीन हो गये। उन्हें तेजो हीन देखकर समस्त क्षत्रिय साधु-साधु कहते हुए भगवान राम की सराहना करने लगे। विस्मय में पड़े हुए परशुराम को देखकर उनके द्वारा उपार्जित स्वर्ग लोक का अंत कर डाला किन्तु गमनागमन की शक्ति कायम रखी। ऐसा जानकर भगवान परशुराम को बड़ा हर्ष हुआ और लोकरक्षक श्री रघुनाथ जी को अपने सौ यज्ञों द्वारा उपार्जित स्वर्गलोक और अपने अस्त्र-शस्त्र उन्हें समर्पित कर दिये। तब महा तेजस्वी रघुनाथ जी ने महामुनि परशुराम जी को प्रणाम किया तथा पाद्य अर्ध्य और आचमनीय आदि के द्वारा उनकी विधि पूर्वक पूजा की। तत्पश्चात भगवान श्री रामचन्द्रजी से पूजित होकर भगवान परशुराम नर-नारायण के रमणीय आश्रम में तपस्या करने को चले गये। तत्पश्चात महाराज दशरथ अपने पुत्र बधुओं के सहित अयोध्या पहुँच गये। ऐसा ही मनतव्य, अध्यात्म रामायण, वाल्मीकी रामायण, नरसिंह पुराण, हरिवंश पुराण, रामस्वंबर पदम् पुराण, अदभुत रामायण, स्कंध पुराण आदि ग्रंथो से मिलता है।

केबल वेदव्यास जी ने महाभारत के वन पर्व श्लोक संख्या 42, 43, 44 में लेख किया है कि भगवान परशुराम ने श्री रामचन्द्र का भारी बल पराक्रम देखने के लिये क्षत्रिय, संहारक, वैशणव धनुष व फरसा लेकर आयोध्या गये

थे। भगवान राम से बल पौरूष संबंधी चर्चा कर तथा वैष्णवी शक्ति से पराभूत होकर उन्हीं के द्वारा पुनः सम्मानित व प्रशंसित होकर वापस महेन्द्राचल पर्वत पर आ गए। भीत नम्रता पूर्वक निवास करते हुए सम्बतसर के बीत जाने तक पराक्रमरहित स्थित रहे। उस समय उनके पितर निर्मद और दुखी देखकर परशुरामजी से बोले-हे पुत्र। विष्णु को प्राप्त होकर यह तुमने अच्छा नहीं किया है। वह सदा त्रिलोकी के पूज्य व मान्य है। अब तुम बधूसर आलपवाली पवित्र नदी में जाओ और उस तीर्थ में स्नान कर फिर से अपने तेज को प्राप्त होगे। वह दीप्ताह नामक तीर्थ है, वहॉ तुम्हारे प्रपितामह भृगुजी ने देव युग में तप किया था, यह वचन सुनकर परशुराम जी ने वैसा ही किया। इस प्रकार परशुराम को फिर से तेज की प्राप्ति हुई।

किन्तु अन्य ग्रंथों में जैसे श्री रामचरित मानस, विश्राम सागर, राधेश्याम रामायण, वसुनायक, रामचन्द्रिका के रचनाकारों ने मिथिलापुर में धनुष टूटने के तुरंत बाद ही भगवान परशुराम जी को विदेह राज के यज्ञ मण्डप में आना तथा श्री लक्ष्मण परशुराम जी का गुल्ली डंडा खेलना बताया गया, जिसमें भिखारी ब्राह्मण भी कहा गया। इस संबंध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। सभी ने लक्ष्मण - परशुराम संवाद देखा-सुना है, एक लुआठी से दागता है, दूसरा पानी डालता है, और मामा वहीं बैठा तमाशा देखता है।

रहस्य

(भीष्म पितामाह से युद्ध तथा कर्ण को ब्रहमास्त्र दान एवं श्राप)

देव तुल्य महारथी इस पृथ्वी पर जिस प्रकार से जन्म ग्रहण किए यह एक रहस्य है, आज के समय में इस रहस्य को जानने व सुनने का कोई औचित्य नहीं है, लिखना कोप भाजन का कारण बन सकता है किन्तु इतिहास है, जिसे न कोई बनाता है, और न बिगाड़ता है वह अपने आप घटित होता है।

त्रिः सप्तकृत्वः पृथिवी कृत्वा निः क्षत्रियां पुरा ।

जामदन्यस्तपस्तपे महेन्द्रे पर्वतोत्तमे ।।

तदा निः क्षत्रिये लोके भार्गवेण कृते सति ।(महा.आ. 4-5)

ब्राह्मणाम् क्षत्रिया राजन् सुतार्थिन्यो अभिचक्रमुः ।।

पूर्वकाल में जमदाग्नि नंदन परशुराम ने इक्कीस बार मदोन्मत, घमण्डी, अविवेकी तथा आतताई क्षत्रियों का विनाश करके उत्तम पर्वत महेन्द्र पर तपस्या की थी। उस समय जब भृगुनंदन ने इस लोक को क्षत्रिय शून्य कर दिया था। क्षत्रिय नारियों ने पुत्र की अभिलाषा से ब्राह्मणों की शरण ग्रहण की थी वे कठोर व्रतधारी ब्रह्मण केवल ऋतुकाल में ही उनसे मिलते थें, न तो कामवश और न बिना ऋतुकाल के ही, उन सहस्त्रों क्षत्राणियों ने ब्रह्मणों से संपर्क (समागम) कर पुनः क्षत्रिय कुल की वृद्धि के लिये अत्यंत बलशाली क्षत्रिय कुमारों तथा कुमारियों को जन्म दिया।

भगवान श्री राम के वंशजो में 57 वन वे शासक झाभिन्न के पतन के बाद हस्तिनापुर में कुरूवंश की स्थापना हुई, इसी में शान्तनु नामक राजा हुए, गंगा तथा शान्तनु के संसर्ग से वसिष्ठमुनि के श्राप व इन्द्र के आदेशानुसार आठो वसु (धर ध्रुव, सोम, अह, अनिल, प्रत्यूष और प्रभाष) महाराज शान्तनु के पुत्र हुए तथा निवृत भी हुए, उन्हीं में से आठवें वसु (प्रभाष) भीष्म नाम से जगत में ख्यात हुए, जिनकी शिक्षा-दीक्षा भृगुनन्दन भगवान परशुराम के

सानिध्य में हुई, जिसमें उन्होनें धनुर्विद्या की सारी शिक्षा प्राप्त की। उन दिनों राजवंशों में आचार्य परम्परा प्रचलित थी, आश्रमों में ऋषि पुत्र व राजपुत्र ही शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। कुरूवंश के सभी राजकुमार आचार्य कृपाचार्य की सानिध्यता में सभी विद्यायों को ग्रहण किया।

बाद में ब्रह्मर्षि भारद्वाजनन्दन आचार्य द्रोणाचार्य से सभी प्रकार धनुर्विद्याएं प्राप्त किये। कालान्तर में आचार्य द्रोणाचार्य को धन की आवश्यकता हुई, जिसकी पूर्ति के लिये वे महेन्द्रांचल पर्वत पर ऋचीकनन्दन भगवान परशुराम के पास गए। अपना नाम कुल (आगिरस) बताकर पृथ्वी पर मस्तक रखकर परशुराम जी के चरणों में प्रणाम किया। तथा करबद्ध होकर कहा, द्विजश्रेष्ठ मैं भारद्वाज का आयोनिज पुत्र द्रोण हूँ। धन की कामना से आपके पास आया हूँ क्षत्रिय संहारक महात्मा परशुराम ने कहा कि तपोधन से मेरे पास जो सुवर्ण व अन्य धन सामग्री थी वह सब मैनें ब्रह्मणों को दान में दे चुका हूँ तथा समुद्र पर्यन्त यह पृथ्वी महर्षि कश्यप को दे दी है। अब मेरा यह शरीर तथा नाना प्रकार के बहुमूल्य अस्त्र-शस्त्र का ज्ञान अवशिष्ट है। इन दोनों में तुम्हें जो अभिष्ट हो मांग लो।

इस पर आचार्य द्रोण ने कहा प्रभो। आप मुझे प्रयोग, रहस्य तथा संहार विधि सहित संपूर्ण अस्त्र शस्त्रों का ज्ञान प्रदान करें। तथास्तु कहकर परशुराम जी ने द्रोण को संपूर्ण अस्त्र प्रदान किए। अस्त्र विद्या में पाण्डित्व प्राप्त कर द्रोण अपने आश्रम पर वापस आ गए, समय बीता, शान्तनु को छोड़कर गंगा के चले जाने के बाद सत्यवती से उनका पुनः विवाह हुआ चित्रांगद तथा विचित्र वीर्य के जन्म के पश्चात् महाराज शान्तनु स्वर्ग वासी हुए, राज्य का सारा बोझ भीष्म के कन्धों पर पड़ा। भाईयों के विवाह की व्यवस्था के लिये कांशीराज की तीन कन्याओं (अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका) का अपहरण कर अपने भाई विचित्र वीर्य का विवाह किया, किन्तु अम्बा ने विवाह के अवसर पर भीष्म पितामह से विनय किया, कुरूवंश शिरोमणि मैनें पहले

अपने मन से शाल्वराज को अपना पति चुन लिया है तथा शाल्वराज ने भी एकांत में मेरा वरण कर लिया है वह बात मेरे पिता को भी नहीं मालूम है, आप सत्यवादी महात्मा है । दूसरे की कामना वाली राज कन्या को अपने घर में कैसे रखेगें । इस बात को सुनकर भीष्म जी ने सुरक्षा प्रहरियों के साथ अम्बा को शाल्वराज के यहॉ भेज दिया ।

शाल्वराज से मिलकर अम्बा ने पूर्व वचनों को याद दिलाते हुए उन्हें अपने को पत्नी रूप में स्वीकार करने की अनुनय विनय किया, किन्तु शाल्वराज ने कहा काशी नरेश के यहॉ एकत्र हुए राजवंशो के सामने भीष्म ने बलपूर्वक तुम्हारा हाथ पकड़ कर अपहरण कर लिया था, अब तुम उन्हीं की शरण मे ंवापस जाओ। खिन्नमन किए अम्बा ने ऋषि आश्रम पर चली गई। वहॉ पर होत्रवाहन और आकृतिव्रण की सलाह पर अम्बा ने भृगनन्दन परशुराम के पास महेन्द्राचल पर्वत पर जाकर उनसे आप बीती सुनाई और विनय किया कि भीष्म आपके शिष्य है, उन्होनें मेरा तिरस्कार किया। अतः आप चलकर उन्हें समझाइश दें कि वे मुझे स्वीकार करें। भगवान परशुराम उस राज कन्या से सारी जानकारी प्राप्त कर उसे शरण में लेकर हस्तिनापुर आए, भीष्म जी को जब यह जानकारी हुई कि जमदाग्निनन्दन भगवान परशुराम मेरी राज्य सीमा में आ गए, उनके स्वागत के लिये ब्राहम्णों तथा गौओं को आगे करके उनकी आगुवानी किया और अर्ध-पद्य से उनकी पूजा अर्चना किया, उस अतिथ्य को स्वीकार कर भगवान परशुराम बोले कुरूनन्दन राजकुमारी अम्बा का राजवंशों के एकत्रित समूह में काशीराज के यहॉ हाथ पकड़ कर अपहरण किया और अब इसका पाणिग्रहण करने से इंकार कर पराये घर भेज दिया तथा इस राजकुमारी को धर्म से भ्रष्ट कर दिया तुम्हारे स्पर्श करने के कारण इसे दूसरा कौन ग्रहण कर सकता है, तुम इसे हरकर लाए थे, इसी कारण राजा शाल्व ने इसके साथ विवाह करने से इंकार कर दिया। अतः अब तुम मेरी आज्ञा से इसे ग्रहण कर लो भीष्म जी ने परशुराम को इंगित कर मै जीवन

पर्यन्त ब्रह्मचारी रहूँगा, इस प्रतिज्ञा से आप भी परिचित है फिर भी नारी ग्रहण करने की बात करते है। ब्राहम्ण मैं भय से दया से, धन के लोभ से, और अन्य किसी कामना से भी क्षत्रिय धर्म का त्याग नहीं कर सकता, यह मेरा स्वीकार किया हुआ व्रत है। साथ ही यह भी कहा कि यदि गुरू भी गर्व में आकर कर्तव्य और अकर्तव्य को न समझते हुए कुपथ का आश्रय ले तो उनका परित्याग कर देना चाहिये। इस बात पर क्रोधित होकर भगवान परशुराम ने कहा रणभूमि, कुरूक्षेत्र होगा, वहीं आओ और मुझे युद्ध का अवसर दो, भीष्म जी माता सत्यवती की आज्ञा लेकर कुरूक्षेत्र में पहूँच गये। इस समाचार को सुनकर माता गंगा भी कुरूक्षेत्र में आ गयी। और भीष्म को बहुत समझाया परंतु वे नहीं माने गुरू और शिष्य का तेईस दिन घोर संग्राम हुआ किसी की जय-पराजय नहीं हुई, चौबीसहवें दिन भीष्म को अष्टावसुओं द्वारा प्रस्वाप्रनास्त्र अस्त्र की प्राप्ति हुई ।जिसके द्वारा परशुराम का अंत करना अवस्यमभावी था, जैसे ही उस अस्त्र को अभिमंत्रित कर भीष्म ने अपने धनुष पर चढ़ाया वैसे ही आकाश मण्डल जलने लगा, समुद्र उछलने लगा, पृथ्वी डगमगाने लगी, उल्कापात होने लगा, देवता व पितर हाहाकार कर उठे और आकाशवाणी हुई, भीष्म - परशुराम अवध्य है, इस अस्त्र की महिमा नष्ट मत करो तथा दोनों रथों के बीच में देवर्षि नारद, महर्षि ऋचीक जमदाग्नि माता गंगा तथा अन्य देवगण उपस्थित हो गए, भीष्म के रण क्षेत्र में पीठ दिखाकर युद्ध से विमुख न होने की बात पर अडिग रहने पर सभी ने परशुराम के क्रोध का निवारण कर अस्त्र शस्त्र रखवाकर विश्व का कल्याण किया। तत्पश्चात कुरूनंदन जो अत्याधिक घायल हो चुके थे। भगवान परशुराम से क्षमा याचना कर चरण धोये, पूजा किया तथा उनकी अनुमति लेकर हस्तिनापुर वापस लौट गये। भगवान परशुराम देव वृंद तथा पितरों की आज्ञा मानकर फिर कभी शस्त्र नहीं उठाने का आस्वासन दें, महेन्द्राचल पर्वत पर चले गये। अम्बा ने यह सारा चरित्र देखकर हताश हो जमुना के तट पर कुछ काल घोर तप किया तथा

भीष्म से बदला लेने की मंशा रखकर अपने शरीर को भष्मीभूत कर दिया। समय बीता चित्रांणगद अवयस्क अवस्था में चित्ररथ नामक गंधर्व के हाथों युद्ध में निःशन्तान मारा गया। विचित्र वीर्य भी अधिक सहवास के कारण पांडु रोग से ग्रसित होकर निःशन्तान स्वर्गवासी हुआ। इस तरह से कुरूकुल का अन्त होता देख माता सत्यवती तथा भीष्म जी की मंत्रणा हुई माता सत्यवती ने भीष्म से राज्य ग्रहण और शन्तानोत्पादन के लिये आग्रह किया, किन्तु भीषम ने जीवन पर्यन्त अविवाहित रहूँगा। ऐसी प्रतिज्ञा की बात बताकर प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया। कुरूकुल का अन्त न हो इस बिन्दु पर माता-पुत्र में पुनः मंत्रणा हुई। अन्त में भीष्म जी ने माता को स्त्रियों के आपद् धर्म के प्रसंग में महाराज मनु के द्वारा बनाए गये नियम की जानकारी दिया -

देवशब्दा सपिण्डका स्त्रियां सम्पड़ानियुतया ।
प्रजोप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षएं ।।59।।
विधवायॉ नियुक्तस्तु घृतास्तों वाग्यतो निशि ।
एकमुत्यादेवत्पुत्रं न द्वितीयं कथंचन ।।60।।(मनु.स्मृ.)

सन्तान न होने पर स्त्री पति, माता-पिता या गुरूजनों की आज्ञा से नियुक्त होकर देवर अथवा किसी अन्य सपिन्ड पुरूष से इच्छित संतान का आधान करा सकती है। इस प्रकार नियुक्त हुआ, पुरूष अपने पूरे शरीर पर धृत का लेप करके रात्रि के समय मौन धारण पूर्वक विधवा में एक ही पुत्र का आधान करें। दूसरे का कभी न करें ।

यथा ! पुनर्भरतषस्य हेतुं सन्तान वृद्धये ।(महा. सम्भ पर्व 1-2)
वक्षयामि नियतं मातस्तन्मे निगदतः श्रृणु ।।
ब्राह्मणों गुणवान् कश्रिद्द धनेनोपनिमन्त्रयताम् ।
विचित्रवीर्य क्षेत्रेशु यः समुत्पादयेत् प्रजाः ।।

भारतवंश की संतानपरम्परा को बढ़ाने और सुरक्षित रखने के लिये जो उपाय नियत है, उसे बता रहा हूँ, किसी गुणवान ब्राह्मण को धन देकर बुलाया

जाय जो विचित्र वीर्य की स्त्रियों के गर्भ से सन्तान उत्पन्न कर सकें।

ऐसी व्यवस्था राजा वेनु ने भी कर रखा था, जिसका प्रतिपादन आज भी समाज (वैश्य- शूद्र) मे प्रचलित है, एक सन्तान प्राप्ति के बाद संबंधित नारी-पुरूष आपस में पिता व पुत्रवधू का बर्ताव करें।

कलयुग में मनुष्यों के असंयमी और कमी होने के कारण नियोग पूर्णितः वर्जित है। राजा वेनु को ऐसा प्रथा प्रतिपादित करने के लिये मनीषियों ने निन्दा की है, सन्त तुलसी ने तो यहाँ तक लिख दिया है, "अधम को वेनु समान"।

उपरोक्त व्यवस्था का अनुशरण करने के बाद भरतवंश का अभ्यिदुय हुआ, बहुत से राजकुमार व राजकुमारियाँ हुई, इन्हीं में से राजा पाण्डु भी है। जिन्होनें कुन्तिभोज की कन्या से पाणिग्रहण किया था। पाणिग्रहण के पूर्व पित्रगृह में चतुर्मासा व्यतीत करने के उद्देश्य से रूके हुए दुर्वासा ऋषि की सेवा श्रुषमा कर कुन्ती ने प्रयोग विधि सहित एक मंत्र का उपदेश प्राप्त किया था, जिसके बल से जिस देवता का आवाहन करना चाहे, वह निष्काम हो या सकाम सब उसके अधीन हो जाते थे। मंत्र सजीव है, या नही प्रायोगार्थ भगवान सूर्य का आवाहन किया न चाहते हुए भी भगवान सूर्य ने उसे कामवासना अनुरूप तैयार कर उसके साथ सहवास किया, जिससे कर्ण नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। लोकलज्जा के कारण उसे जल में प्रवाहित कर दिया, जिसका लालन पोषण अधिरथ नामक निषाद (सूत) तथा पत्नी राधा ने किया तथा उसका नाम वसुषेण रखा, जो बाद में कर्ण तथा वैकर्तन नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ। प्रथम दुर्योधन की कृपा से उसकी प्रारंभिक शिक्षा - दीक्षा आचार्य कृपाचार्य व द्रोणाचार्य से हुई, परन्तु इतने से उसे संतोष नहीं हुआ, वह दिव्यास्त्रों को प्राप्त करने की इच्छा से ब्रह्मण का भेष बनाकर भगवान परशुराम के पास गया तथा उनकी सेवा आराधना कर उनसे दिव्यास्त्र प्राप्त कर लिया। अर्जुन का हित साधन के लिये देवराज इन्द्र ने एक भृंङ्गी कीड़े के रूप

में शरीर में प्रविष्ट होकर उसकी दाईं जंघा में छेद कर दिया। इसी जंघा पर भगवान परशुराम अपना मस्तक रखकर सो रहे थे। जंघा में छेद होने से गरम-गरम रक्त की धारा प्रवाहित हुई जो उनकी कनपटी को छूती हुई जमीन पर गिरने लगी, गुरू के जगने के भय से कर्ण विचलित नहीं हुआ, परंतु गर्मी का अहसास होते ही वे जग गये। यह दशा देखकर तथा कर्ण को धैर्य से युक्त देखकर पूछा अरे। तू ब्राह्मण तो है नहीं ? फिर कौन है, सच-सच बता दें। कर्ण ने भयभीत होकर कहा भगवन। मै सूत हूँ। तदनन्तदर कर्ण का वृतान्त सुनकर महातपस्वी परशुराम जी ने क्रोध में भरकर श्राप दिया तूने छल करके ब्रह्मास्त्र प्राप्त कर लिया है, इसलिये काम पड़ने पर तेरा यह अस्त्र तुझे याद न आयेगा। तेरी मृत्यु के समय को छोड़कर अन्य अवसरों पर ही अस्त्र तेरे काम आ सकता है क्योंकि ब्राह्मणेत्तर मनुष्यों में यह ब्रह्मास्त्र सदा स्थिर नहीं रह सकता। यह कहकर उसे भगा दिया।

भगवान श्रीकृष्ण को युद्ध विषयक परामर्श देना

जरासंध के बार बार आक्रमण करने के कारण मथुरा के निवासी तथा राज परिवार दुःखी थे, उस दुख का निवारण करने के लिये पिता श्री वसुदेव से मंत्रणा कर दोनों भाई (बलराम-श्रीकृष्ण) मथुरा से निकल कर दक्षिण पथ का अनुसरण किया। इच्छानुसार रूप धारण करने वाले दोनों पुरूष रत्न सह्यपर्वत के रमणीय शिखरों पर विचरण करते हुए अपने मार्ग पर आगे बढते ही गए, सह्यपर्वत अंतर्गत करकीरपुर पहूँच गए। वहाँ पहुँच कर दोनों वीर वेणॉनदी के तट पर बरोंहों से युक्त एक बरगद का वृक्ष देखा। उस वृक्ष के नीचे उद्दीप्त तपस्वी भृगुनन्दन परशुराम जी विराजमान थे, जिनके एक कंधे पर फरसा सटा हुआ-जटा और वल्कल धारण किए हुए थे, उनका शरीर गौर वर्ण तथा अग्निसिखा के समान प्रकाशमान था। उनके पास श्वेत रंग की सबत्सा धेनु थी, वह केवल होम के लिये दुही जाती थी, इसलिये उसे होमधेनु (कामधेनु) कहा जाता था। दोनों भाईयों ने हाथ जोड़कर उनके चरणों में प्रणाम किया। इसके बाद वक्ताओं में श्रेष्ठ लोक वृतान्त के ज्ञान में कुशल श्रीकृष्ण ने मुनिश्रेष्ठ परशुराम जी से स्नेहयुक्त मधुर वाणी में कहा भगवन्। मै समझता हूँ कि आप भृगुकुलभूषण क्षत्रिय कुल विनाशक मुनिश्रेष्ठ जमदाग्निनन्दन परशुराम जी है। मुनिश्रेष्ठ हमारी जन्मभूमि मथुरा पुरी है, जो यमुना तट पर शोभा पाती है। हम दोनों यादव है, हमारे पिताजी का नाम वसुदेव जी है। हम दोनों भाई कंश के भय से ब्रज मे रखे गये थे। किशोरावस्था को प्राप्त होकर दोनों भाईयों ने मथुरा में प्रवेश किया तथा रंगशाला में बलपूर्वक कंश को मार डाला। उससे खिन्न होकर जरासंध ने हमारे नगर को घेरने का निश्चिय कर चुका है, यद्यपि हम दोनों उसके साथ बहुत युद्ध कर चुके है, अभी हम लोगों को शक्ति संचय करना है, हमारे पास युद्ध के लिये रथ नहीं है, हम पैदल है, हमारे शरीर पर कवच तथा हाथ में अस्त्र शस्त्र नहीं है। जरासंध के आक्रमण

के भय से नगर छोड़कर यहाँ निकल आएं है। ऐसी स्थिति में मै क्या करूं आप हमें सलाह मात्र देकर हमारा सत्कार करें। उन दोनों का निर्दोष वचन सुनकर भृगुवंशी परशुराम ने धर्म युक्त उत्तर दिया। सुन्दर मुख वाले, कमलनयन तुम्हारा ब्रज में निवास करना, तथा दानवों व कंश का वध होना वह सब मुझे विदित है।

जरासंघ के साथ होने वाले विग्रह को जानकर ही मै तुमसे मिलने यहाँ आ गया हूँ तीनों लोकों में जो कुछ भी है, वह तुमसे अविदित नहीं है, अत: तुम्हें सलाह देने की आवश्यकता नहीं है, तथापि मै अपनी भक्तिमात्र से प्रेरित होकर जो बात कहता हूँ । उसे सुनो। तुम्हारे पूर्वजों ने यहाँ करवीरपुर नामक नगर बसाया था, जिसमें इस समय महायशस्वी वासुदेव रहता है, जो श्रृगांल नाम से प्रसिद्ध है तुम्हारे कुल में उत्पन्न हुए समस्त उत्तराधिकारी क्षत्रिय नरेशों को मार डाला है, ऐश्वर्य के मद में उन्मत होकर अपने पुत्रों को भी नहीं मानता, अत: आपको वहाँ रहना ठीक नहीं है। हम लोग वेणाँनदी को पार कर खटवाग्डवा नाम वाली नदी को पार क्रौंचपुर चलेंगे, वहाँ तुम्हारे ही कुल के एक राजा महाकवि नाम से राज्य करते है, उस राजा से मिले बिना ही आनडुह नामक तीर्थ होते हुए सह्मपर्वत को लांघते हुए गोमन्त शैल पर पहुँचेगें, यहाँ देवताओं के विमान उतरते हैं तथा ऊंचाई में मेरूगिरि के समान है। तुम दोनों भाई वहाँ निवास करते हुए उस गोमन्त नामक शैल के शिखर पर विचरण करते हुए दुर्ग- युद्ध द्वारा धावा कर जरासंध को जीत लोगे। वहाँ भयंकर युद्ध होने पर तुम दोनों के हाथ में दिव्य आयुध स्वयं उपस्थित हो जायेगें। श्री कृष्ण यहाँ देवताओं ने यादवों तथा अन्य राजाओं के महान युद्ध का निर्देश दिया, जिससे रक्त व मांस की कीच जम जायेगी। यहाँ सुदर्शन चक्र , सम्वर्तक हल, कौमोदकी गदा, तथा सौनन्द नाम मूसल ये विष्णु संबंधी सभी आयुद्ध तुम्हें संग्राम में दर्शन देंगे। वह संग्राम चक्र-मूसल नाम से विख्यात होगा। तुम वैष्णव रूप से स्थित हो देवताओं की विजय के लिये चिरकाल से भूले हुए

अपने चक्र -और गदा ग्रहण करना। बलराम भी अपना हल-मूसल ग्रहण कर लेंगे । पृथ्वी का भार उतारने के लिये भू-मंडल के राजाओं के साथ तुम्हारा यह पहला युद्ध होगा, ऐसा देवताओं ने कहा है, इसके बाद पृथ्वी पर अस्त्र शस्त्रों से व्याप्त एक महान संग्राम होगा, जो लोगों में महाभारत के नाम से विख्यात होगा। मै तुम्हारे कार्य सिद्धि के लिये स्वयं भी साधना करूंगा। सभी भूमिपालों को चाहिए कि दुर्गम संकट व युद्ध के अवसरों पर मेरा स्मरण करें। ऐसा कहकर भगवान श्री कृष्ण को विजय सूचक आर्शीवाद देकर स्वयं अभीष्ट दिशा को चले गये।

विश्वयुद्ध रोकने का प्रयास

(कौरव-पाण्डवों में संधि स्थापना के प्रयत्न का औचित्य बताना)

कार्तिक मास की रेवती नक्षत्र में मैत्र, नाम मुहूर्त उपस्थित होने पर सत्यगुणी पुरूषों में श्रेष्ठ एवं समर्थ दशार्हनन्दन भगवान श्री कृष्ण नान्दिघोष नामक रथ जो, गरूणचिन्हित ध्वज से संयुक्त शैव, सुग्रीव, मेघपुष्प, तथा बलाहक नाम वाले घोड़ो से जुते हुए रथ पर आरूढ़ हो (कौरव-पाण्डव) संधि हेतु हस्तिनापुर के लिये प्रस्थित हुए। हस्तिनापुर पहुंच कर रात्रि विश्राम महामना बिदुर के घर में किया, पूरी रात चर्चा में बीती प्रातः काल का समस्त आवश्यक कर्म क्रमशः सम्पन्न किया तत्पश्चात् महात्मा विदुर को साथ लिए, कौरव सभा भवन के लिये प्रस्थित हुए, मार्ग में भगवान श्री कृष्ण का दर्शन करने के लिये बालक, वृद्ध, महिलाएं, कौरवों का सारा नगर सड़क पर आ गया। सभी से सम्मानित व पूजित होकर इन्द्रभवन तुल्य उस कौरव सभा के भीतर प्रवेश किया। दसार्हनन्दन श्रीकृष्ण के आते ही प्रज्ञाचक्षु राजा धृतराष्ट्र भीष्म, द्रोणाचार्य तथा चारों ओर बैठे हुए सहस्त्रों नरेश उठकर खड़े हो गए। भगवान श्रीकृष्ण के बैठने के लिये सुवर्णभूषित सर्वतोभद्र नामक सिंहासन रखा गया था, उस पर विराजमान होने के पश्चात् समस्त राजाओं तथा सभी कौरवों ने भलीभांति पूजन किया। उसी समय उस राजसभा में कुछ ऋषि, अधःशिरा सर्पमाली, महार्षि देवल अर्वावासु, सुजानु, मैत्रेय, शुवक, बली, दल्मपुत्र वक, स्कूल शिरा परासरनन्दन श्रीकृष्ण द्वैयापन, आयोद धौम्य, धौम्य, अणीमाण्डव्य कौशिक, त्रिषवण, पर्णाद, घटजानुक, वायुभक्षः, पाराशर्य, शीलवान् अशनि, धाता, अकृतव्रण श्वेतकेतु, कहोल एवं महातपस्वी भगवान परशुराम आ गए जिन्हें उचित आसन देकर पूजा अर्चना से पूजित किया गया।

उस समय देवराज तथा दैत्यराज के भी सखा जमदग्निनन्दन परशुराम ने श्री कृष्ण के पास जाकर उन्हें हृदय से लगाया, तथा इस प्रकार कहा।

अलसी के फूल के समान मनोहर कान्ति वाले (तुलसी-कुन्द- मन्दार-पारिजात- सरोरूहै:। पन्चभिर्नाथिता माला वनमाला प्रकीर्तिता (इन पांचो वस्तुओं से बनी माला को वनमाला कहते है) वनमाला तथा पीताम्बर धारी श्रीकृष्ण, जिन्होनें पुरातन देवासुर संग्राम अपनी आँखों से देखा है, ये पुण्यात्मा देवार्सिगण, अनेक शास्त्रों के विद्वान ब्रह्मर्षिगण तथा आपका सम्मान करने वाले तपस्वी, राजर्षिगण, संपूर्ण दिशाओं से एकत्र हुए, राजागण तथा सत्यस्वरूप आप भगवान जर्नादन को देखने की उतकण्ठा लिए, तथा कौरवों व अन्य राजमण्डली के बीच आप द्वारा कहीं जाने वाली धर्म-अर्थ से युक्त वाणी व विदुर द्वारा कहे गए सत्य एवं हितकर वचनों को सुनने के लिये हम लोग यहाँ आए है। इतना कहकर वाणी को विराम देकर भगवान परशुराम अपने आसन पर बैठ गए। तब सुन्दर दन्तावलि से सुशोभित तथा दुमदुभि के समान गंभीर स्वर वाले भगवान श्री कृष्ण, राजा धृतराष्ट्र की ओर मुखातिब होकर बोले! भरतनन्दन मैं आपसे यह प्रार्थना करने के लिये यहाँ आया हूँ कि क्षत्रिय वीरों का संहार हुए बिना ही कौरव और पाण्डवों में संधि हो जाय, मुझे इसके सिवाय दूसरी कोई पहल हीं नहीं करनी है। क्योंकि जानने योग्य जितनी बाते है, जैसे भीम को विष देना, लाक्षागृह में आग लगाना, छल-कपट कर राज्य हरण करना, द्रोपदी को नंगी करने का प्रयास, फिर अज्ञात वास देना, द्रोपदी का हरण करने का प्रयास आदि सब आपको विदित है। इन समस्त राजाओं में कुरूवंश ही सर्वश्रेष्ठ है, तथा सर्वगुणों से सम्पन्न है। इस वंश में कृपा, अनुकम्पा, करूणा, अनृसंसता, सरलता, क्षमा और सत्य अन्य राजवंशों की अपेक्षा अधिक पाये जाते है, ऐसे उत्तम कुल में अपने ही श्रेष्ठ बन्धुओं के साथ प्रकट और गुप्त रूप से मिथ्या आचरण, अशिष्ठता पूर्ण व्यवहार छल-कपट किया जायें शोभा नहीं देता।

राजन् । आपके पुत्रों ने धर्म की सारी मर्यादा तोड़ दी है, इस बात को आप अच्छी तरह जानते हैं, जिससे कौरवों में भयंकर आपत्ति उपस्थित हुई है।

यदि इसकी उपेक्षा की गई तो समस्त भूमण्डल का विध्वंस हो जायेगा। इसलिये यदि आप चाहें तो इस भयानकर विपत्ति का निवारण हो सकता है, कौरवों-पाण्डवों के बीच शांति स्थापित होना, मै कठिन कार्य नहीं मानता। दोनों पक्ष्यों में संधि कराना आपके और मेरे अधीन है, आप अपने पुत्रों को मर्यादा में रखिये, मै पाण्डवों को नियंत्रण में रखूंगा। पाण्डवों के साथ बैर और विवाद करने पर अच्छा परिणाम नहीं दिखाई देता। इसलिये आप अपने वचन का दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए पाण्डवों का आधा राज्य वापिस कर दें। युद्ध का परिणाम एक पक्षीय नहीं होता कौरव और पाण्डव दोनों का विनाश हो सकता है, क्योंकि दोनों पक्ष्यों में दिव्यास्त्र मौजूद है । ऐसी दशा में आपको कौन सा सुख मिलेगा। भरतश्रेष्ठ - इसलिये मै आग्रह करता हूॅ कि जो यहॉ पर क्षत्री एकत्रित है, अमर्स में भरकर एक दूसरे का विनाश करने पर तत्पर है, इस महाविनाश से आपके प्रकृतिस्थ होने पर सब लोग बच जायेंगे। प्रजानाथ कुन्ती के पुत्र आपकी सेवा के लिये भी तैयार है, और युद्ध के लिये भी प्रस्तुत है। आपको जो मार्ग उचित जान पड़े उसी मार्ग का अवलम्बन कीजिए, ऐसा कहकर भगवान जर्नादन वाणी को विराम देकर आसन पर बैठ गए।

भगवान के उस कथन का समस्त राजवंशो ने ह्दय से आदर किया वहॉ उसके उत्तर में कोई भी कुछ कहने को अग्रसर नहीं हुआ। उन सब राजाओं के मौन ही रह जाने पर जमदाग्निनन्दन परशुराम ने कौरव सभा में इस प्रकार कहा । राजन्। तुम निःशंक होकर मेरी यह उदाहरणयुक्त बात सुनो। सुनकर यदि कल्याणकारी और उत्तम समझो तो स्वीकार करो।

पूर्वकाल में दम्भोदभव नाम से प्रसिद्ध सर्वभौम एक सम्राट हुए थे, जो इस भूमण्डल का राज्य भोगते थे, ऐसा मैने सुना है। वे महारथी और पराक्रमी नरेश रात बीतने पर प्रातः काल उठकर ब्राह्मणों और क्षत्रियों से पूछते थे क्या इस जगत में कोई ऐसा शस्त्रधारी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र है जो युद्ध

में मेरा सामना कर सके या मुझसे अधिक पराक्रमी हो। इस प्रकार पूछते हुए राजा दम्भोदभव महान् गर्व से उन्मन्त हो दूसरे को कुछ न समझते हुए इस पृथ्वी पर विचरते थे। ब्राह्मणों के मना करने पर भी वे बार बार यही प्रश्न उनसे पूछते रहे। वेद के सिद्धांत का साक्षात्कार करने वाले महामना तपस्वी क्रोध से तमतमा उठे, उससे इस प्रकार बोले- राजन् ! दो ऐसे पुरूष रत्न है, जिन्हें युद्ध में आज तक पराभाव नहीं होना पड़ा। तुम उनकी समानता नहीं कर सकते। जाओं वही तुम्हें युद्धदान देगें। उनके ऐसा कहने पर दम्भोदभव ने उन दोनों का नाम ग्राम तथा उनके कर्मो की जानकारी प्राप्त कर गन्धमादन पर्वत पर सारी सैन्य सामग्री लेकर पहुॅच गया, जहॉ नर और नरायण नाम के दो तपस्वी तप में लीन थे। निकट जाकर उनके चरणों पर मस्तक रख कर प्रणाम किया, तथा कुशल समाचार पूछा । तब नर-नारायण ने राजा का स्वागत किया तथा आसन देकर जल, फल-फूल, मूल-कन्द देकर भोजन के लिये आमंत्रित किया। तथा पूछा मै आपकी क्या सेवा करूं। यह सुनकर राजा ने अपना अभिप्राय बता कर दोनों से कहॉ युद्ध करने की इच्छा से यहॉ आया हॅू। कृपया आप दोनों अतिथि सत्कार के रूप में इसे ही पूर्ण कर दें। जिससे मेरी चिरकाल की अभिलाषा पूर्ण हो जायें। इस पर नर-नारायण बोले-राजन्! मेरा आश्रम क्रोध-लोभ से रहित है, इस आश्रम में कभी युद्ध नहीं होता।

फिर अस्त्र शस्त्र और कुटिल मनोवृत्ति का मनुष्य यहॉ कैसे रह सकता है । इस पृथ्वी पर बहुत से क्षत्री योद्धा हैं, आप कहीं और जाकर युद्ध विषयक अभिलाषा पूर्ण करें। भगवान परशुराम ने कहा, कुरूनन्दन इतने पर भी वह राजा उन्हें ललकारता ही रहा, तथा तपस्वी नर को मार डालने की नियत से उन पर बाणो की वर्षा करने लगा। क्रोधित होकर नर ने एक मुट्ठी शीक (त्रिण) लेकर उसे ऐषीकास्त्र मंत्र से अभिमंत्रित कर राजा तथा उसके सैनिकों के ऑख, कान, नाक, मुंह को वीध डाला यह एक अद्भुत सी घटना हुई, राजा दम्भोदभव मुनि के चरणों में गिर पड़े और बोले भगवन् मेरा कल्याण हो।

शरण चाहने वालों को शरण देने वाले भगवान नर ने उससे कहा आज से तू ब्राह्मण हितैषी और महात्माजनो का फिर कभी सबल या निर्बल का बिना बलाबल समझे ऐसा आक्षेप न करना, जाओं तुम्हारा कल्याण हो। दोनों नरों का पूजन कर दम्भोदभव अपनी राजधानी वापस आ गए, इस प्रकार पूर्वकाल में महात्मा नर ने ऐसा अद्भुत कर्म किया था, नारायण तो उनसे अधिक श्रेष्ठ है अतः राजन् जब तक श्रेष्ठ धनुष गान्डीप पर दिव्यास्त्रों का संधान नहीं किया जाता तब तक ही आप अभिमान छोड़कर अर्जुन से संधि कर लो। अर्जुन में असंख्य गुण है, एवं भगवान जर्नादन तो उनसे भी बढ़कर है, पूर्वकाल के वे ही तपस्वी इस समय आपके सामने नर (अर्जुन), नारायण (कृष्ण) रूप में उपस्थित है, सारा मोह मत्सर्य छोड़कर दोनों पक्षों में संधि करा दो, तथा सुख से हस्तिनापुर का राज्य भोगो। ऐसी ही मंत्रणा सभा में उपस्थित सभी ऋषियों ने धृतराष्ट को दिया किन्तु प्रबल पुत्र मोह में पड़कर धृतराष्ट ने मनसा-वाचा कर्मणा से संधि विषयक कोई सार्थक पहल नहीं किया, फलस्वरूप कुरूक्षेत्र के मैदान में 18 दिन अवर्णीय युद्ध हुआ जिसमें एक अरब छाछठ करोड़ बीस लाख योद्धा मारे गए, जिनमें 1 ब्राह्मण भी शामिल है तथा बीस हजार सैनिक लापता हुए।

इसके पश्चात अग्नि पुराणानान्तर्गत अग्निदेव से ऋब्बिधान विविध कामनाओं की सिद्धि के लिये प्रयुक्त होने वाले ऋगवेद, सामवेद, यजुर्यवेद, अथर्ववेद मंत्रो का निर्देश (विधान) सुनकर युग समाप्ति पर अदृश्य रूप से महेन्द्र पर्वत पर विचरण कर रहे है।

एक नयन

स्वजनों को चित्रकूट से गन्तब्य स्थानों को भेजकर, बैदही समेत प्रभु श्री राम खिन्न मन किन्तु प्रसन्न मुद्रा में व्यतीत करने लगे। देवर्षि श्री नारद जी द्वारा भगवान श्री राम के माधुर्य का वर्णन सुनकर जयन्त पत्नि रूप माधुर्य रस पान करने के लिये अपनी कुछ सखियों समेत आकाश मार्ग से चित्रकूट पहुंचकर पूर्णिमा की चादनी चारों तरफ फैल रही थी। जयन्त पत्नि भगवान श्री राम के पास पहुँच कर दण्डवत प्रणाम किया और रूप का दर्शन कर कृतकृत्य हुई तथा कुछ भक्तिगीतों को गाकर नृत्य किया। तत्पश्चात मनोवांछित फल पाकर स्वर्गधाम को चली गई। यह समाचार जब देवपुत्र जयन्त को मिला तो वह आग बबूला हो गया कि मेरी रानी हो कर राज्य से निष्कासित दो राज्य पुत्रों के सामनें नाच गान किया। वह कैसे राज्यपुत्र हैं उनका बल पौरूष देखने के लिये जयन्त काग (कौआ) का रूप धर कर तुरन्त चित्रकूट पहूँचा उस समय प्रभु श्री राम बैदेही की जंघा पर सिर रखकर विश्राम कर रहे थे, कौआ वेशधारी जयन्त ने माता सीता के चरण पर चोंच मार कर चोटिल कर दिया जिससे उनके पैर से खून की धारा बहने लगी। एक अन्य कथानक के अनुसार पावन मृगों के अच्छे किस्म की माँस को रसोई घर में रखकर अनुप्रयोगी माँस कें टुकड़ों को ऊपर आकाश की तरफ फेंक रही थी। जिन्हें गीध और कौए ऊपर ही पकड़ लेते थे। उसी समय कौआ रूपी जयन्त माता सीता के समस्त अंगों को नख व चोंच से चोट पहुँचा कर एक पेड़ की डाल पर बैठ गया। जानकी के शरीर से रक्त की धारा बहने लगी।

श्री राम रक्त की धारा देख और कारण को जान एक सींक का टुकड़ा धनुष पर संधान कर जयन्त की ओर इंगित कर छोड़ दिया। यह देख जयन्त बिहवल होकर घबराकर भाग दिया और जब पीछे मुड़कर देखता तो वाण उसके पीछे-पीछे चला आ रहा था। वाण को पीछे लगा देखकर जयन्त

व्याकुल हो कर शिव लोंक ब्रम्हलोक में भागता हुआ शरण की याचना करने लगा किन्तु उसे कही से भी सहायता का वचन नही मिला। यहा तक कि जयन्त अपने वास्तविक रूप को धर कर पिता इन्द्र देव के पास गया किन्तु वहां से भी शरण नही मिली। हतास होकर कि अब प्राण नही बचेगा वह भूतल पर गिरने ही वाला था कि तभी दयालु देवर्षि नारद जी मिल गये। जिन्हें देख जयन्त साष्टांग दण्डवत प्रणाम कर अपनी मनोकथा सुनाई और त्राहिमाम् त्राहिमाम् कह कर देवर्षि नारद के चरणों में गिर गया। जयन्त की पीड़ा और मनोदशा देख देवर्षि नारद जी ने उसे भगवान श्री राम की शरण में जाने के लिये कहा। जयन्त ऊहापोह की स्थित में हतास चित्रकुट भगवान श्री राम के पास पहुँचकर त्राहिमाम् त्राहिमाम् कहते हुए चरणों पर गिर गया और अपनी धृष्टता के लिये छमा मागते हुए प्राणदान की भिक्षा मॉगने लगा। प्रभुश्री राम बोले तुम्हारा कृत्य बध योग्य है। फिर विचार कर कि यह अज्ञानी है मेरे बल पौरूष को न जानकर ऐसा कृत्य किया। इसका वध नही करना चाहिए क्योंकि यह शरणागत है। इससे प्रभु ने एक सींक से उसकी दाई आँख को छेदित कर उसे मुक्त कर दिया।

देवेन्द्र इन्द्र को जब से यह जानकारी हुई कि मेरा पुत्र काना हो गया तब से इन्द्र दुखी रहने लगे कुछ काल बीतने के ऊपरान्त उन्होंने समस्त देवताओं तथा ऋषियों की एक सभा बुलाई जिसमें जयन्त के द्वारा किये गये दुष्कृत्य को बताया और उसके काना होने की बात बताई और उपस्थित देव व ऋषियों से निवेदन किया कि ऐसा प्रयास करिये कि जयन्त की आँख की ज्योति वापस आ जाये। सभी उपस्थित देव व ऋषियों ने हाथ उठा कर कहा कि यह राम द्रोही है हम लोग कोई सहायता नही कर सकते। ऋषियों ने युक्ति निकाल कर जयन्त को भगवान श्री परशुराम जी के पास जाने का सुझाव दिया।

जयन्त भगवान परशुराम जी के आश्रम में पहुँच कर त्राहिमाम् त्राहिमाम् कह कर दण्डवत प्रणाम किया। भगवान परशुराम ने जयन्त से पूरी जानकारी

प्राप्त कर उसे निर्देशित किया कि आज मैं जितनी यज्ञ करू उस यज्ञ में आमंत्रित ऋगुवेदीय ब्राम्हण की जूठी पत्तले उठाने एवं बचे हुए भोजनों का भक्क्षण करो और मेरे आश्रम में रहो। जिसे स्वीकार कर जयन्त प्रभु श्री परशुराम के आश्रम में रहने लगा।

कुछ काल बाद युग समाप्त होने पर भगवान श्री परशुराम ने जयन्त से कहा कि इस वसुन्धरा से मेरा कार्यकाल समाप्त हो रहा है अब मैं महेन्द्राचल पर्वत पर जा रहा हूँ यह सुन कर जयन्त ने प्रभु का चरण पकड़ लिया और बोला कि प्रभु अब मेरा क्या होगा। जयन्त की बात सुनकर भगवान श्री परशुराम क्षणिक शान्त हो कर फिर अपने कमण्डल से एक चुल्लू जल निकाल कर दिया और निर्देषित कर कहा कि जल के एक भाग को पी लो और एक भाग से आँख धो लो। तुम्हारा काना पन दूर हो जायेगा। किन्तु जिस भेष से तुमने यह कृत्य किया है वह कौआ काना ही रहेगा। जयन्त ने भगवान श्री परशुराम के आज्ञा का पालन किया और उसकी आँख ठीक हो गई। किन्तु कौआ आज भी काना है और इसके बाद भगवान परशुराम अदृश्य हो गये।

यह कथा सुनकर-श्रोता और सुह्रिद पाठकगण इस कथा पर संदेह न करें। क्योकि तप की महिमा अपार है। तप के बल से ही चतुरानन सृष्टि की रचना करते है। तप के बल से ही श्री हरि जगत का पालन करते हैं। और तप के बल से ही श्री हरि संघार करते हैं यह बात देवताओं की हुई इस बसुन्धरा पर पैदा हुए मनुष्योंजनों ने भी अलौकिक कार्य किये है। श्री विश्वामित्र महाराज ने तप के बल पर ही राजर्षि त्रिशंकु को शशरीर देवलोक पहुँचा दिया। यह एक अदभुत कार्य हुआ उन्होंने ही क्रुद्ध हो कर दूसरी सृष्टि की रचना कर डाली। यत्र-तत्र विश्वामित्र जन पाये जाते है। तप के ही प्रभाव से महाराज भगीरथ ने त्रिपथगामिनी माँ गंगा को इस धरातल पर लाकर लोक कल्याण किया। तप के बल पर ऋषि अगस्त ने तीन अंजुल जल पान कर समुन्द्र को सुखा दिया। तप के ही बल से जानवी ने गंगा का ही पान कर लिया

और अनुनय विनय के बाद दाहिनी जंघा से गंगा को मुक्त किया। इसी कारण गंगा का नाम जान्हवी भी है। तप के ही प्रभाव से महर्षि कपिल ने साठ हजार सगर पुत्रों को भस्म कर दिया। तप के बल से ही विश्वामित्र ब्रम्हर्षि हो गये। तप के ही प्रभाव से राजर्षि मुकुन्द ने काल यवन को भस्म कर दिया। तप के प्रभाव से अष्टाबकु ने डुबे हुए रघुवंश कुल को बचा लिया। तप के ही प्रभाव से बालक ध्रुव ने अचल पदवी पाई। तप के ही बल से अनुसुइया ने त्रिदेवों को बालक बना दिया। इस तरह से भगवान परशुराम अपने तप के प्रभाव से सबकुछ प्रदान कर सकते हैं किन्तु मोक्ष प्रदान नहीं कर सकते मोक्ष केवल विष्णु करते है उन्हीं के रूप में भगवान राम और भगवान कृष्ण। श्री राम विश्व विजयी रावण-कुम्भकरण का वध किया उनके मुख से एक ज्योतिपुन्ज निकली और भगवान राम के मुँह में समा गई। इसी तरह से भगवान श्री कृष्ण का चक्र शिशुपाल का सर काट दिया उसके शरीर से ज्योतिपुन्ज निकली वह भगवान श्री कृष्ण के मुह में समा गई।

(मानस, वाल्मीक, वायु, अग्नि, कृतिवास, महाभारत.....)

त्रिवेणी प्रसाद मिश्र ''वेदान्ती''

मिश्रा टिम्बर मऊगंज जिला-रीवा (म.प्र.)

भगवान परशुराम जी की आरती

जै परशुराम देवा। स्वामी परशुराम देवा।
तुमको निशदिन ध्यावत, सुरमुनि भू देवा॥ जै परशुराम -
भृगुकुल कमल दिवाकर, ऋषि जन के त्राता।
माता रेणुका जाये, जमदग्नि ताता॥ जै परशुराम -
शीष जटा गल माला, कटी में मृग छाला।
ब्रह्म सूत्र कांधे पर, अरू त्रिपण्ड भाला॥ जै परशुराम -
परशु हस्तगत सोहे, चतुरवेद ज्ञाता।
माता पिता के सेवक, जग में विख्याता॥ जै परशुराम -
कार्तवीर्य हंकारी, सहस भुजा धारी।
क्षण में मार गिरायो, भुजा काट डारी॥ जै परशुराम -
त्रेता युग में आए, गुरू धनु भंग सुन्यो।
विनित धनुष भंजक थे, देख हियो बिगस्यो॥ जै परशुराम -
निज धनु दे चढ़वा के, ब्रह्म परख लीन्हयो।
चरण पड़े रघुनायक, ब्रह्म तेज दोन्हयो॥ जै परशुराम -
द्वापर में भी याचक, तेरे दर आए।
धनुर्वेद की शिक्षा भीष्मादिक पाए॥ जै परशुराम -
अजर अमर अविनाशी, भक्त विश्वासी।
कलि में आप बने हो, गिरी महेन्द्र वासी॥ जै परशुराम -
चारो युग के रक्षाक, मन वांछित दाता।
आवे शरण तुम्हारी, मन में हर्षाता ॥ जै परशुराम -
चिरंजीव की आरती, जो कोई जन गावे।
जीवन सुख से बीते, सौ वसन्त पावे॥ जै परशुराम -
जो श्रद्धा से नित प्रति, यह आरती गावे।
कहत महर्षि व्यास, सुख सम्पत्ति पावे॥ जै परशुराम -







मूल्य-50/-